

मेगास्थनीज *

का

भारत विवरण

बाबू अवधबिहारी शरण एम० ए० बी० एल०

आरा नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ।

मेगास्थनीज का भारतविवरण

अर्थात्

मिस्टर मैकक्रिन्डल कर्तृक मेगास्थनीज के आङ्गल
अनुवाद का भाषानुवाद।

अनुवादक

बाबू अवधविहारी शरण एम. ए. बी. एल.



आरा नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित

१९१६·

खड्गविलास-प्रेस बांकीपुर में चण्डीप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित।

प्रथम बार ५०० | मूल्य ॥)

भूमिका

सन १९११ के ग्रीष्मावकाश में यह पुस्तक लिखने की इच्छा मुझे हुई और एक सप्ताह के भीतर इस को मैं ने सम्पन्न कर दिया। फिर मुझे इसे दोहराने का अवसर नहीं आया। प्रूफ संशोधन के समय कुछ अंश तो मेरे सम्मुख आया परन्तु अवकाश नहीं रहने के कारण मुझे प्रूफरीडर ही पर अधिक निर्भर रहना पड़ा जिन की कृपा से पुस्तक में अनेक प्रकार की भूलें और त्रुटियां रह गयीं हैं। इस वार पाठक क्षमा करें। यदि अन्य संस्करण का अवसर आया तो वे त्रुटियां अवश्य दूर कर दी जायंगी।

विनीत

अवध विहारी शरण।

मेगास्थनीज़ का भारतविवरण ।

[Mc Crindle साहब के अंग्रेजी अनुवाद का भाषानुवाद ।]

प्रथम पत्रखण्ड ।

अथवा मेगस्थनीज़ के वृत्तान्त का सारांश ।

[डायोडोरस—द्वितीय खण्ड, ३५—४२]

(३५) भारतवर्ष का आकार चतुर्भुज है। इस के पूर्व और पश्चिम * की सीमा महासमुद्र से बद्ध है। उत्तर की ओर हिमोडस (Hemodos) पर्वत स्कीदिया (Skythia) के उस प्रान्त से इसे पृथक् करता है जहां साकाइ (Sakai) निवास करते हैं। और चतुर्थ अथवा पश्चिम दिशा इन्डस (Indus) नदी से बंधी है जो नाइल (Nile) के अतिरिक्त संसार में सब नदियों से बड़ी है। समस्त देश का विस्तार पूर्व से पश्चिम २८००० स्टेडियम् † और उत्तर से दक्षिण ३२,००० स्टेडियम है।

भारतवर्ष का विस्तार इतना होने के कारण यह पृथ्वी के लगभग समस्त उत्तरीय ग्रीष्ममण्डल (Torrid Zone) में छाया हुआ है। वस्तुत: इस के सीमान्त स्थानों में शङ्कु की छाया प्राय: पड़ती ही नहीं।

सप्तर्षिमण्डल रात को दीख नहीं पड़ते और अत्यन्त दूरवर्ती

---

* प्रकरण देखने से ज्ञात होता है कि दक्षिण के स्थान में पश्चिम लिखा गया है।

† स्टेडियम (Stadium) = ६०६ फीट ८ इञ्च। इस के अनुसार ३२१८ मील चौड़ाई और ३६७७ मील लम्बाई होती है।

प्रान्तों में आर्कट्यूरस (Arcturus) भी दृष्टिगोचर नहीं होता इस के साथ साथ यह भी कहा जाता है कि वहां छाया दक्षिण की ओर पड़ती है।

भारतवर्ष में अनेक विशाल पर्वत हैं जिन पर प्रत्येक प्रकार के फल देने वाले वृक्ष बहुत पाये जाते हैं। यहां अनेक विस्तीर्ण समतल भूमि हैं जो अत्यन्त उर्वर हैं। इन में से कोई कम कोई अधिक सुन्दर हैं, किन्तु सभी नदियों के समूह से विभक्त हैं। अधिकांश भूमि पटायी जाती है अतएव यहां वर्ष में दो फसिल होता है। सभी प्रकार के जन्तु यहां अधिकता से पाये जाते हैं। खेतों में चरने वाले पशु और आकाश में उड़नेवाले पक्षी, भिन्न २ आकार एवम् बल वाले मिलते हैं। हाथियों का तो यहां ठिकाना नहीं जो बड़े बेडौल होते हैं। इन का खाद्य पदार्थ यहां बहुत उपजता है जिस से इन का बल लीबिया (Lybia) के हाथियों से कहीं अधिक होता है। भारतवासी एक बार में बहुत हाथी बझाते हैं और इन्हें युद्ध करने की शिक्षा देते हैं क्योंकि विजयप्राप्त करने में ये बड़े काम के होते हैं।

(३६) जीवननिर्वाह करने की सामग्री परिपूर्ण होने के कारण यहां के निवासी साधारण मनुष्यों की लम्बाई से अधिक ऊंचे और आत्मगौरव से भरे होते हैं। वे कलाओं में निपुण हैं जैसा स्वच्छ वायु और अत्युत्तम जल के व्यवहार करनेवालों को होना चाहिये। भूमि पर सभी प्रकार के प्रात फल फलते हैं और भूगर्भ में नाना प्रकार के धातुओं की खानें हैं। सोना और चांदी बहुत है, तामा और लोहा भी कम नहीं है, और टिन तथा अन्यान्य धातु भी अधिक हैं जिन से

उपयोगी वस्तुएं और गहने बनते हैं एवम् अस्त्र शस्त्र तथा युद्ध की सामग्री प्रस्तुत की जाती है।

खाद्य अन्नों के अतिरिक्त, समस्त देश में बाजरा, कोदो, मंडुआ बहुत होता है जो नदियों की अधिकता के कारण भली भांति पकता है। भिन्न २ प्रकार के अनेक दाल चावल और बोसपोरम् (Bosporum) होते हैं और बहुत से अन्य खाने योग्य पौधे होते हैं जिन में से अधिक स्वयम् उपजते हैं। इन के अतिरिक्त कितने पशुओं के खाने योग्य उद्भिद् उत्पन्न होते हैं जिन के विषय में लिखने से विस्तार हो जायगा। इसी से कहा जाता है कि भारतवर्ष में अकाल कभी नहीं पड़ा और पोषक खाद्य पदार्थों का एकदम अभाव कभी नहीं हुआ। यहां प्रतिवर्ष दो बार वर्षा होती है, एक बार जाड़े के दिनों में जिस समय अन्य देशों के समान यहां भी गेहूं बोया जाता है और फिर जब सूर्य उत्तरायण होकर अत्यन्त दूरस्थ स्थान को पहुंचते हैं उस समय। यही अवसर धान बोसपोरम् सरसों और बाजरा आदिक बोने का है। इस प्रकार भारतवासी सदा वर्ष में दो फसिल काटते हैं। और यदि एक फसिल न भी हो तो भी दूसरी अवश्य होती है। अनेक प्रकार के फल और भिन्न २ प्रकार के खाने योग्य कन्द कोई कम कोई अधिक मीठे तरी में होते हैं। ये मनुष्य का जीवन धारण करने में बड़ी सहायता पहुंचाते हैं। इस देश के सभी खण्ड में जल की बड़ी सुविधा है, चाहे वह नदी से मिले अथवा ग्रीष्मकाल में वर्षा से प्राप्त हो। यहां वर्षा ऐसे नियमित समय पर आती है जिसे देख कर आश्चर्य होता है। कड़ी गरमी पड़ने से तरी में उपजने वाले पौधों की जड़ पकजाती है, विशेष कर के उन उद्भिदों की जिन की डांट लम्बी होती है।

इन सभों के अतिरिक्त भारतवासियों में ऐसी चाल है जिस से दुर्भिक्ष पड़ना बहुत रुकता है। अन्य जातियों में युद्ध के समय हरे भरे खेत भी उजाड़ कर दिये जाते हैं किन्तु भारतवासी किसान की जाति को पूज्य दृष्टि से देखते हैं। और जिस समय समीप में संग्राम होता रहता है उस समय भी हल जोतने वाले निर्भीक भाव से अपना काम करते रहते हैं क्योंकि दोनों दल के योद्धा आपस ही में रक्तपात करते हैं और इन किसानों को नहीं छेड़ते। और वे शत्रु के देश में न आग ही लगाते हैं और न वृक्ष ही काटते हैं।

(३७) भारतवर्ष में बहुत सी नदियां हैं जो बड़ी और जलयान चलाने के योग्य हैं। ये उत्तरीय सीमास्थित पर्वतों से निकल कर समभूमि पर बहती हुई आपस में मिल कर गङ्गा जी में गिरती हैं। यह नदी जड़ में तीस स्टेडियम् चौड़ी है, और उत्तर से दक्षिण बहती हुई महासमुद्र में गिरी है। यही नदी गङ्गारिदाई (Gandaridai) जाति की पूर्वीय सीमा है। इस जाति का हस्तिबल असीम है। इसी कारण इन का देश किसी विदेशी राजा से नहीं विजित हुआ। क्योंकि अन्य सभी जाति इन विकटाकार जन्तुओं की संख्या और बल से भय खाते हैं। [इसी प्रकार मैकीडन का अलेक्ज़ान्डर (Alexander = सिकन्दर) ने समस्त एशिया जीतने के उपरान्त गङ्गारिदाई से लड़ाई नहीं ठानी। क्योंकि जब वह अपनी सारी सेना के साथ गङ्गा के किनारे पहुंचा और यह सुना कि गङ्गारिदाई के पास युद्ध विद्या में निपुण और रण के लिये सुसज्जित चार सहस्र हस्ति हैं, तब उस ने इन्हें जीतना असम्भव समझ कर विजय की अभिलाषा छोड़ दी।] दूसरी नदी जो विस्तार में

गङ्गा के बराबर है और इन्डुस (Indus) के नाम से विख्यात है वह भी अपने प्रतिद्वन्दी के समान उत्तर में निकलती है और भारत की सीमा को बांधती हुई महासागर में गिरती है। राह में यह बड़े विस्तृत समभूमि खण्ड पर बहती हुई कई नदियों का जल ले जाती है। ये सब नदियां जलयान के चलाने के योग्य हैं इन में से अधिक विख्यात हुपानिस् (Hupanis) हुडास्पीस (Hudaspes) और अकेसिनीस (Akesines) हैं।

इन के अतिरिक्त अनेक प्रकार की बहुत सी नदियां हैं जो सारे देश में फैली हुई हैं जिन से उद्यान शाकादि और अन्न पटते हैं। यहां के दार्शनिक एवम् विज्ञानवेत्ता नदियों की अधिकता तथा जल की ढेरी के निम्न कारण बताते हैं। वे कहते हैं कि भारतवर्ष के चारो ओर के देश, जहां स्कीदियन, (Skythian) बैक्ट्रियन (Bactrian) और आर्य (Aryan) रहते हैं वे सब यहां की भूमि से ऊंचे हैं, अतएव वैज्ञानिक नियम के अनुसार वहां का जल सब नीचे चला आता है और जब भूमि में जल अधिक नहीं रह सकता है तब नदियों के स्वरूप में वहिगत होता है।

भारत में सिलास (Sillas) नाम की एक नदी है जो उसी नाम वाले झील से निकलती है। इस में और नदियों से विशेषता यह है कि जो कुछ इस में फेंका जाता है वह उतराता नहीं किन्तु नीचे बैठ जाता है।

(२८) यह कहा जाता है कि भारतवर्ष जो आकार में बहुत बड़ा है नाना प्रकार के भिन्न २ जातियों का निवासस्थान है। इन में से सब इसी देश के आदिकाल से रहने वाले हैं,

दूसरे देश से एक भी नहीं आये हैं। यह भी कहते हैं कि दूसरे देश से भारत में कोई उपनिवेश नहीं स्थापित हुआ और न भारत ही ने अन्यदेश में किसी उपनिवेश की स्थापना की। इनकथा से ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में यहां के निवासी ऐसे फलों को खा कर जीवननिर्वाह करते थे जो स्वयम् उपजते थे, और देशी पशुओं के चर्म को पहनते थे, जैसी ग्रीस निवासियों की प्रथा थी। ग्रीस की नाईं यहां भी मानवजीवन को उन्नत करनेवाले यंत्र और कलाएं क्रमशः आविष्कृत हुईं। आवश्यकता ने इन कलाओं को ऐसे जीवों को सिखलाया जो सभ्य, अभ्यास करने योग्य, हाथों से युक्त, ज्ञानी और बुद्धिमान् थे।

भारतवासियों में बड़े२ विद्वान् कई कथाओं को कहते हैं जिन का सारांश देदेना उचित है। वे कहते हैं कि प्राचीनकाल में जिस समय यहां के निवासी ग्रामों में रहते थे, डायोन्युसस् (Dionu-son) * बड़ी सेना के साथ पश्चिम के देश से निकला।

---

* पत्रखण्ड (१) क।

[डायोडोरस तृतीय खण्ड ६३]

डायोन्युसस् के विषय में।

जैसा मैं कह आया हूं किसी किसी का अनुमान है कि इस नाम के तीन व्यक्ति थे जो भिन्न भिन्न काल में हुए और भिन्न २ कार्यों को सम्पादित किया। उन में सब से प्राचीन इन्डोस (Indos) था। इस देश में सोहावनी ऋतु रहने के कारण अङ्गूर स्वयम् बहुत उत्पन्न होता था। इन्डोस ने पहले पहल अङ्गूर गारना और उस के मद्य का उचित व्यवहार करना सिखाया। उस ने यह भी निर्धारित किया कि गूलर तथा अन्य

उस ने समस्त देश पर विजय प्राप्त किया क्योंकि उस के विरोध करने के योग्य कोई बड़ा नगर नहीं था। किन्तु अधिक गरमी पड़ने से उस के सैनिक रोगग्रस्त हो गये। अतएव उन का नेता जो बुद्धिमत्ता के लिये प्रसिद्ध था, उन को पहाड़ पर ले गया। शीतल वायु और झरनों के स्वच्छ जल का सेवन करने से सेना नीरोग हो गयी। जहां

फलों के वृक्ष किस प्रकार बोये और बड़े किये जाते हैं और इस विद्या को अपने बाद वह संसार में छोड़ गया। यह भी उस ने निश्चय किया कि ये फल किस प्रकार तोड़े जाते हैं। इसी लिये वह लीनायोस (Lenaios) भी कहलाता था। इसी डायोन्युसस को कटपोगोन (Katapogon) भी कहते हैं क्योंकि भारतवासी मरणपर्यन्त अपनी दाढ़ी बड़े यत्न से रखते हैं। डायोन्युसस ने एक बड़ी सेना लेकर संसार के सभी प्रदेशों का विजय किया। उस ने मनुष्यों को अङ्गूर बोना और गारना सिखलाया जिस से लीनायोस उस का नाम पड़ा। इस प्रकार अपने सब आविष्कारों को सिखाने के कारण मरण के उपरान्त उस ने अमर प्रतिष्ठा उन लोगों से प्राप्त की जिन्हें उस के श्रम से लाभ हुआ था। यह भी कहते हैं कि आज तक उस देवता का वासस्थान भारतवर्ष में दिखलाया जाता है। और स्थानिक भाषाओं में नगरों का नाम उस के नाम के अनुसार पुकारा जाता है। इस के अतिरिक्त कितने बड़े २ प्रमाण हैं जिन से सिद्ध होता है कि वह भारतवर्ष ही में उत्पन्न हुआ था किन्तु इन के विषय में लिखना तूल होगा।

डायोन्युसस की सेना ने आरोग्यता लाभ की वह मोरस (Mua) कहलाता था। निःसन्देह इसी घटना से ग्रीक लोगों की यह कथा निकली है कि डायोन्युसस् अपने पिता की जांघ में पला था। अनन्तर उपयोगी वृक्षों की कृत्रिम रू.. ने उपजाना सोच कर उस ने भारतवासियों को मद्य बनाने का और अन्य लाभकारी विद्याओं की शिक्षा दी। उस ने छोटे २ ग्रामों को उचित स्थानों में हटा कर बड़े २ नगरों की स्थापना की। उस ने मनुष्यों को ईश्वर की पूजा करने की विधि सिखायी और कानून तथा न्यायालय स्थापित किया। इस प्रकार अनेक बृहत् तथा उत्तम कार्यों को करने के कारण वह देवता समझा जाने लगा और चिरस्थायी प्रतिष्ठा का भाजन हुआ। यह भी कहा जाता है कि उस के साथ एक स्त्रियों की सेना थी और सैनिकों को युद्ध के समय सज्जित करने के लिये ढोल तथा झाल का व्यवहार किया जाता था क्योंकि तुरही उन दिनों लोगों को ज्ञात नहीं थी। बावन वर्ष भारत में राज्य करने के उपरान्त वृद्धावस्था में अपने पुत्रों को राज्य छोड़ कर उस ने शरीर त्याग किया। इन के वंशज अटूट परम्परा से राज्य करते आये किन्तु बहुत दिनों के बाद राजा का पद तोड़ दिया गया और नगरों में प्रजातन्त्र प्रणाली स्थापित होगयी।

(३८) यही वृत्त डायोन्युसस् तथा उस के वंशजों का है जो भारतवर्ष के पहाड़ी प्रदेशों में प्रचलित है। वे यह भी कहते हैं कि हेरैक्लीज् (Heracles) का जन्म उन्हीं लोगों में हुआ था। ग्रीक लोगों के समान वे उसे गदा तथा व्याघ्र चर्मधारी बताते हैं। बल और वीर्य्य उसे सब मनुष्यों से अधिक था और उस ने समुद्र तथा पृथ्वी को दुष्ट जन्तुओं से रहित कर दिया।

अनेक स्त्रियों से विवाह करने पर उसे बहुत पुत्र हुए किन्तु कन्या एक ही हुई । जब उस के पुत्र युवा हुए तब उस ने भारतवर्ष को तुल्य भागों में विभक्त करके अपने पुत्रों को भिन्न २ भागों का राज्य दे दिया। उसी प्रकार उस ने अपनी कन्या के लिये भी प्रबन्ध किया और उसे रानी बनाया। उस ने बहुत से नगरों को स्थापित किया जिस में पालीबोथ्रा (Palibothra) सब से बड़ा और प्रसिद्ध है। उस नगर में उस ने बड़े विशाल एवम् मूल्यवान् राजप्रासाद बनवाये और बहुत मनुष्यों को बसाया। नगर को सुरक्षित करने के लिये उस ने चारों ओर बड़े २ गर्त खोदवाये जो नदी के जल से भरे जाते थे। हेरेक्लीज़ को मरण के उपरान्त स्थायी यश प्राप्त हुआ। उस के वंशज कई पीढ़ी तक राज्य करते रहे और बड़े बड़े कार्य करके उन सभी ने ख्याति लाभ की, किन्तु न तो वे भारत के बाहर चढ़ाई करने गये न उन्हों ने दूसरे देश में उपनिवेश ही स्थापित किया। अन्त में बहुत दिन बीत जाने पर अनेक नगरों ने प्रजातंत्र प्रणाली स्थापित की।

सिकन्दर की चढ़ाई के समय भारतवासियों की प्रचलित प्रथाओं में एक विशेष ध्यान देने योग्य है। इसे उन के प्राचीन दार्शनिकों ने निकाला है और यह निश्चय प्रशंसा योग्य है। वहां का नियम यह है कि उन में से कोई किसी अवस्था में गुलाम नहीं हो सकेगा, किन्तु स्वतंत्रता का सुख लूटते हुए सभी दूसरों के स्वत्वों की रक्षा करेंगे, क्योंकि जो दूसरों पर प्रभुत्व करना नहीं जानते अथवा जिन्हें दूसरों का दासत्व करना नहीं आता वे ही ऐसा स्वभाव प्राप्त कर सकते हैं और यह सर्वथा उचित एवम् युक्तिसङ्गत है कि नियम का बन्धन सब किसी पर समान हो किन्तु धन की न्यूनता अथवा अधिकता लोगों में रहे।

(४०) भारतवर्ष के निवासी सात जातियों में विभक्त हैं। पहली जाति दार्शनिकों की है जो अन्य जातियों की अपेक्षा संख्या में कम है किन्तु गौरव में सब से उच्च हैं। इन्हें कोई सार्वजनिक काम नहीं करना पड़ता और ये न किसी के स्वामी हैं और न सेवक। साधारण मनुष्य जीवन के धार्मिक कर्त्तव्य तथा मृतमनुष्यों का श्राद्ध कराने के लिये लोग इन्हें नियत करते हैं और उन का विश्वास है कि ये देवताओं के बड़े प्रिय हैं और परलोक की सब बातों से अभिज्ञ हैं। इन कार्यों के कराने के उपलक्ष में इन्हें बहुमूल्य पदार्थ और कितने अधिकार मिलते हैं। भारतवर्ष के सर्वसाधारण का ये बड़ा उपकार करते हैं। जब वर्ष आरम्भ होने पर सब मनुष्य एकत्र होते हैं तब ये अनावृष्टि, अतिवृष्टि, अनुकूलवायु, रोग तथा अन्य विषयों पर अपनी भविष्यद्वाणी कहते हैं जिसे सुन कर लोगों को लाभ हो। इस प्रकार वहां के राजा तथा प्रजा भविष्य को पहले ही जान कर उसी के अनुसार तैयारी करते हैं, वे उचित प्रबन्ध करने में कभी नहीं चूकते जिस से आवश्यकता पड़ने पर उन्हें सहायता मिले। जिस दार्शनिक की भविष्यद्वाणी असत्य होती है उसे निन्दा के अतिरिक्त कोई दण्ड नहीं मिलता और वह जीवन के शेषभाग में चुप रहता है।

दूसरी जाति किसानों की है जिन की संख्या दूसरी जातियों की अपेक्षा अधिक है। इन्हें युद्ध अथवा अन्य सार्वजनिक काम नहीं करना पड़ता अतएव ये अपना कुल समय कृषि ही में व्यतीत करते हैं। शत्रु भी अपने खेत में काम करनेवाले कृषक के निकट पहुंच कर उस पर प्रहार नहीं करते क्योंकि इस जाति के मनुष्य सर्वसाधारण के उपकारी समझे जाते हैं। और

अत्याचार से रक्षित रहते हैं। इस प्रकार भूमि उजाड़ नहीं की जाती और अन्न अत्यन्त अधिक उपजता है जिस से जीवन को पूर्ण सुखमय बनानेवाली सभी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। कृषकगण सपुत्र कलत्र ग्रामों में रहते हैं और नगर में कभी जाना नहीं चाहते। इन्हें राजा को भूमिकर देना पड़ता है क्योंकि समस्त भारतवर्ष राजा का धन है और कोई दूसरा मनुष्य भूमि का स्वामी नहीं हो सकता। भूमिकर के अतिरिक्त इन्हें राजकीय कोष में उपज का चतुर्थांश देना पड़ता है।

तीसरी जाति ग्वाले और गड़ेरियों, तथा पशु पालनेवाले अन्य मनुष्यों की है जो न ग्राम ही में रहते हैं न नगरही में किन्तु शिविर बना कर मैदान में निवास करते हैं। वे आखेट कर के अथवा बझा कर देश को हानिकारक पक्षियों और जङ्गली जन्तुओं से रहित कर देते हैं। वे इस काम को बड़े उद्योग एवम् उत्कण्ठा के साथ करते हैं और इस प्रकार भारत को उन विघ्नों से मुक्त करते हैं जो यहां बहुत होतेहैं, यथा नाना प्रकार के बनैले पशु और पक्षी जो किसानों के बीज को चर जाते हैं।

(४१) चौथी जाति शिल्पकारों की है। इस में से कुछ अस्त्र शस्त्र बनाते हैं और कुछ कृषि तथा अन्य जीविका सम्बन्धी हथियारों को प्रस्तुत करते हैं। इन्हें कुछ कर नहीं देना पड़ता वरन राजकीय कोष से इन्हें आर्थिक सहायता मिलती है।

पांचवीं जाति योद्धाओं की है। ये रण के लिये भली भांति शिक्षित और सुसज्जित होते हैं। संख्या में ये द्वितीय जाति हैं और शान्ति रहने पर आलसी तथा विलासी हो जाते हैं। सम्पूर्ण सेना अर्थात् योद्धा, युद्ध के घोड़े, हस्ति तथा अन्य सब सामग्री राजा के व्यय से रक्खे जाते हैं।

छठीं जाति निरीक्षकों की है। उन का कर्तव्य भारत में जो कुछ होता है उन सबों का निरीक्षण करना तथा उसे राजा से निवेदन करना है। जहां राजा नहीं है वहां पदाधिकारियों से कहना पड़ता है।

सातवीं जाति मंत्रियों तथा उपदेशकों की है जो सार्वजनिक विषय पर विचार करते हैं। इस जाति की संख्या सब से कम है किन्तु यह सब से अधिक प्रतिष्ठित है क्योंकि इस जाति के लोग बड़े सच्चरित्र और बुद्धिमान् होते हैं। इसी जाति के मनुष्य राजा के मन्त्री कोषाध्यक्ष और झगड़ा निबटाने के लिये पञ्च नियत किये जाते हैं। सेनापति और प्रधान पदाधिकारी प्राय: इसी जाति के होते हैं।

येही विभाग हैं जिन में भारत के मनुष्य विभक्त हैं। अपनी जाति के बाहर कोई विवाह नहीं कर सकता और न अपनी जीविका छोड़ कर अन्य जीविका ग्रहण कर सकता है। यथा योद्धा कृषक नहीं हो सकता, और शिल्पकार दार्शनिक नहीं हो सकता।

(४२) भारतवर्ष में बड़े विशाल हाथियों की संख्या बहुत है। इन का आकार और बल अन्य देशीय हाथियों से कहीं अधिक है। ये हथिनियों के साथ किसी विशेष रीति से नहीं सङ्गम करते जैसा कि कुछ लोगों का कथन है, किन्तु घोड़े अथवा अन्य चतुष्पदों की नाईं ये भी मैथुन करते हैं। कम से कम सोलह मास और अधिक से अधिक अठारह मास में ये बच्चा देते हैं। घोड़ों के सदृश साधारणत: इन्हें भी एक ही बच्चा होता है जिसे उस की मा छ: मास तक दूध पिलाती है। कितने हाथी वृद्ध मनुष्य की अवस्था तक जीते हैं। उन में जो अत्यन्त दीर्घजीवी हैं वे दो सौ वर्ष तक जीवित रहते हैं।

भारतवासियों में विदेशी मनुष्यों के लिये भी कर्मचारी नियत किये जाते हैं, जिन का कर्तव्य यह देखना है कि किसी विदेशी पर अत्याचार न हो। किसी का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है तो वे वैद्य को उस की औषधि करने के लिये भेजते हैं और अन्य भांति से भी उस को रक्षा करते हैं। यदि कोई उन में से मर जाता है तो उसे गाड़ देते हैं और उस का धन उस के सम्बन्धियों को दे देते हैं। विचारकर्ता भी ऐसे झगड़ों को बड़ी सावधानी से देखते हैं जिस में विदेशी मिश्रित रहते हैं और जो उन के साथ अनुचित व्यवहार करता है उस पर बड़ी कड़ाई करते हैं।

प्रथम भाग।

द्वितीय परिच्छेद।

[एरियन—सिकन्दर की चढ़ाई।]

भारतवर्ष की सीमा, साधारण वर्णन और इस की नदियों के विषय में।

मेगेस्थनीज़ आरकोसिया के राजप्रतिनिधि सिबर्टियस (Sibutios) के साथ रहता था और वह स्वयम् कहता है कि वह भारत के राजा सन्द्रकोट्टस * (Sandrakottos) से बराबर भेंट किया करता था। उस का कथन है और एराटोस्थेनीज़ भी कहता है कि दक्षिण एशिया चार खण्डों में विभक्त है, जिन में भारतवर्ष सब से बड़ा है। और सब से छोटा वह खण्ड है जो यूफ्रेटीज़ (Euphrates) नदी और हम लोगों के समुद्र के बीच में है। शेष दो खण्ड यूफ्रेटीज़ और इन्डस (सिन्धु) नदी के

* चन्द्रगुप्त को ग्रीक लोग सन्द्रकोट्टस, चन्द्रकोट्टस और चन्द्रकुप्तस आदि कहते थे।

बीच में है, और जिन्हें ऐसी नदियां अन्य खण्डों से पृथक करती हैं। ये दोनों खण्ड मिल कर के भी भारतवर्ष की तुलना नहीं कर सकते। ऐसे लेखक कहते हैं कि भारत की सीमा पूर्व की ओर महासागर से बंधी है, जो नीचे दक्षिण तक चला जाता है। उत्तरीय सीमा टारस पर्वत तक काकेशस पहाड़ बांधता है और पश्चिम तथा पश्चिमोत्तर की सीमा इन्डस नदी से बद्ध होती है। भारतवर्ष का बहुत बड़ा खण्ड समभूमि है, और लोग अनुमान करते हैं कि यह नदियों में बह कर आने वाले मिट्टी के जमजाने से बना है। इस बात से लोग ऐसा सोचते हैं कि अन्य देशों में समतल भूमि अधिक नदियों ही से बनी हैं। इसी कारण प्राचीन समय में कोई देश उस की नदी के नाम से भी पुकारा जाता था। इस का उदाहरण देखिये। एशिया (माइनर) में एक प्रान्त है जो हरमोस (Hermos) का मैदान कहलाता है। और हरमोस एक नदी का नाम है जो डिन्डिमीनो पर्वत (Mount of Mother Dindymêné) से निकल कर इयोलिया (Æolia) का नगर स्मिर्ना (Smyrna) के निकट समुद्र में गिरती है। लीडिया का मैदान कैस्ट्रोस (Kaiiseros) है जो उस नाम की नदी के अनुसार विख्यात है। उसी प्रकार मीसिया (Mysia) में कैकोस का मैदान है। और मायान्ड्रोस (Maiandros) नामक केरिया (Karia) में एक मैदान है जो यवनों * के नगर माइलेटस (Miletus) तक विस्तृत है, इजिप्ट (मिस्र) के दोनों इतिहासवेत्ता हिरोडोटस (Herodotus) और हिकेटायोस

---

* पहले केवल ग्रीक लोगों को यवन कहते थे। यह शब्द Ionian से निकला है।

(Hekataios) { और यदि मिश्र पर ग्रन्थ लिखनेवाला हिकेटायोस के अतिरिक्त दूसरा कोई हो तो वह्लो } इस विषय में सम्मत हैं कि मिश्रदेश नाइल नदी से बना है; और सम्भवत: इसदेश का नाम उसी नदी के अनुसार पड़ा है क्योंकि प्राचीन समय में उस नदी का नाम ऐजिप्टस (Aigyptos) था जिसे आजकल, इजिप्टदेशवासी स्वयम् और अन्य जातिवाले भी नाइल (Nile) कहते हैं। इस का प्रमाण होमर (Homer) के उन वाक्यों से मिलता है जिन में वह कहता है कि मिनिलायोस (Menelaös) ने ऐजिप्टस नदी के मुंह पर अपने जहाजों को ठहराया।] तब यदि प्रत्येक मैदान में एक ही नदी, हहलू न होने पर भी ऐसी है कि अपने बहाव के साथ अपनी जड़ से मिट्टी ले जाकर नयी भूमि बनाती है तो भारतवर्ष के विषय में समभूमिखण्डों की स्थिति अथवा नदियों द्वारा उन को बनावट नहीं मानना एकदम युक्तिविरुद्ध होगा। क्योंकि हरमोस, कोसट्रोस, केकोस और मयान्ड्रोस तथा एशिया के अन्य सभी नदियां जो मेडिटरेनियन समुद्र में गिरती हैं ये कुल मिलकर जल के परिमाण में भारतवर्ष की एक साधारण नदी की समता नहीं कर सकतीं और सब से बड़ी नदी गङ्गा से तुलना कौन करे जिस के सामने इजिप्ट की नाइल और यूरोप की डेन्युब तुच्छ हैं। और यदि ये सब मिला दी जायं तो भी ये सिन्धु नदी की बराबरी नहीं कर सकतीं जो जड़ही में बहुत चौड़ी है और एशिया की नदियों से भी बड़ी २ पन्द्रह नदियों का जल लेकर उन से देश का नामकरण का गौरव छीनती हुई समुद्र में जाकर गिरती है।

तृतीय पत्रखण्ड ।

एरियन-भारतवर्ष—भारतवर्ष की सीमा के विषय में ।

(एरियन का अनुवाद देखो)

चतुर्थ पत्रखण्ड ।

स्ट्रैबो—भारत की सीमा और विस्तार * पर ।

भारतवर्ष उत्तर की ओर टारस पर्वतों के अन्तभाग से घिरा है। और अरियाना (Ariana) से लेकर पूर्वीय समुद्र तक उन पर्वतों से बंधा है जिन्हें वहां के निवासी परपमिसोस (Parapamisos) हिमोडस (Hemodôs) और हिमायोस तथा अन्यनामों से पुकारते हैं। इसे मैसिडन (Macedon) के रहनेवाले काकेशस (Kaukasos) भी कहते हैं। पश्चिम की सीमा इण्डस नदी है किन्तु दक्षिण और पूर्व के भाग जो बहुत विस्तृत हैं, वे ऐटलान्टिक महासागर में घुस गये हैं। भारतवर्ष का आकार विषम चतुर्भुज के ऐसा है क्योंकि इस के बड़े बाहु अपने सामने की भुजाओं से ३००० स्टेडियम अधिक हैं। इतनी ही लम्बाई उस भूमि की है जो समुद्र में चली गयी है।

---

* भारतवर्ष के विस्तार के विषय में प्राचीन लेखकों में मतभेद है। उत्तर से दक्षिन मेगस्थनीज़ के अनुसार १६००० स्टेडियम है, प्लीनी के अनुसार २२८०० स्टेडियम, डायोडोरस के अनुसार २८००० स्टेडियम, डीयाइमेकस के अनुसार कहीं २०००० और कहीं ३०००० स्टेडियम और टौलेमी के अनुसार १६८०० स्टेडियम है। इस का निर्णय करने के समय यह ध्यान में रखना चाहिये कि उस समय भारतवर्ष काबुल और गान्धार से कन्या कुमारी तक समझा जाता था।

मेगस्थनीज पश्चिम की सीमा काकेशस पर्वतों से लेकर समुद्र सिन्धु नदी के किनारे २ दक्षिणात्य तक १३००० स्टेडियम् है। अतएव पूर्वीय सीमा समुद्र में निकली हुई ३००० स्टेडियम् भूमि को मिला कर १६००० स्टेडियम् के लगभग होगी। इतनी ही भारतवर्ष की चौड़ाई है। पश्चिम से पूर्व पाली बोथ्रा तक भारत का विस्तार अधिक निश्चय के साथ कहा जा सकता है क्योंकि राजकीय सड़क जो उसी नगर को जाता है, शोएनी (Schoeni) * से नाप लिया गया है। यह लम्बाई में १०००० स्टेडियम् है। समुद्र से पाली बोथ्रा तक गङ्गा द्वारा जलयात्रा कर के आने में जितना समय लगता है उसी से उस के आगे का विस्तार निर्धारित किया जा सकता है। यह भी ६००० स्टेडियम् के लगभग होगा। अतएव पूरी लम्बाई कम से कम १६००० स्टेडियम् है। यही विचार एरैटोस्थेनीज (Erastesthenes) का है, जिसे वह कहता है कि उस ने राजकीय सड़क के मंज़िलों को प्रामाणिक बहियों से निश्चय किया था। इस विषय में मेगेस्थेनीज़ भी उस से सम्मत है। [किन्तु पेट्रोक्लीज लम्बाई १००० स्टेडियम् कम रखता है।]

पञ्चम पत्रखण्ड।

स्ट्रैबो।

भारतवर्ष के विस्तार के विषय में।

फिर हिप्पार्कस (Hipparchos) अपनी टीका के द्वितीय

---

* शोएनी एक योजन के बराबर होता है और दस स्टेडियम् लगभग एक कोस के बराबर है।

भाग में एरेस्टोस्थेनीज पर यह दोषारोपण करता है कि उस ने पेट्रोक्लोज का अविश्वास किया क्योंकि पेट्रोक्लोज भारतवर्ष की लम्बाई के विषय में मेगेस्थेनीज से असम्मत है। मेगेस्थेनीज इसे १६००० स्टेडियम् लम्बा कहता है पर पेट्रोक्लोज उस से १००० स्टेडियम् कम ही ठहराता है।

षष्ठ पत्रखण्ड।

स्ट्रेबो।

भारतवर्ष के विस्तार के विषय में।

[इसी से मनुष्य भलीभांति समझ सकता है कि सब लेखकों का वृत्तान्त एक दूसरे से कितना भिन्न है। टीशियस (Ktesias) कहता है कि भारतवर्ष एशिया के अवशिष्ट भागों से छोटा नहीं है। ओनेक्राइटस (Oneskritos) इसे निवासयोग्य संसार के तृतीयांश के तुल्य समझता है। और नियारकस (Nearchos) का कथन है कि [केवल सम भूमिखण्डों को पार करने में चार मास लगजाते हैं।] मेगेस्थेनीज और डिमाइमेकस (Deimachos) के अनुसार दक्षिण सागर से काकेशस पर्वत पर्यन्त २०००० स्टेडियम् है। [किन्तु डिमाइमेकस यह मानता है कि कहीं २ लम्बाई ३०००० स्टेडियम् से भी अधिक है। इन सभों के विषय में पुस्तक के पूर्वभाग में लिखा जा चुका है।]

सप्तम पत्रखण्ड।

स्ट्रेबो।

भारत वर्ष के विस्तार के विषय में।

हिप्पार्कस इस विचार का विरोध करता है वह कहता है कि इन के प्रमाण मानने योग्य नहीं हैं। उस के अनुसार पेट्रो-

लोज विश्वस्त नहीं है क्योंकि उस से और डिग्राइमेकस तथा मेगास्थनीज ऐसे योग्य एवम् मान्य पुरुषों से विरोध पड़ता है। ये दोनों कहते हैं कि भारत की लम्बाई दक्षिण सागर से कहीं २०००० स्टेडियम् और कहीं ३०००० स्टेडियम् है। हिप्पार्कस कहता है कि इन का वर्णन उस देश के प्राचीन नक्शों से मिलता है।

अष्टम पत्रखण्ड।

ऐरियन।

भारतवर्ष के विस्तार पर।

मेगास्थनीज के अनुसार भारतवर्ष की चौड़ाई पूर्व से पश्चिम है यद्यपि दूसरे इसे लम्बाई कहते हैं। मेगास्थनीज कहता है कि इस देश की चौड़ाई जहां बहुत कम है वहां १६००० स्टेडियम् है, और इस की लम्बाई उत्तर से दक्षिण जहां सब से कम है वहां २२३०० स्टेडियम् है।

नवम पत्रखण्ड

स्ट्रैबो।

सप्तर्षिमण्डल के अस्त होने तथा छाया विपरीत दिशा में पड़ने के विषय में।

फिर उस (एरैस्टस्थनीज) ने डिग्राइमेकस की अनभिज्ञता और व्यवहारिक ज्ञान का अभाव दिखाने की चेष्टा की। इस का प्रमाण उस की निम्नबातों से मिलता था। वह भारतवर्ष को पृथिवी के मध्यभाग* से दक्षिण समझता था। और मेगास्थनीज

* अंग्रेजी में यहां निम्नरूप से दिया है। India lay between the autumnal equinox and wintur tropic. इस का अर्थ मैं यही निकाल सका जो ऊपर लिखा है।

के उस कथन का विरोध करता था जिस में वह कहता है कि भारतवर्ष दाक्षिणात्य प्रान्तों में सप्तर्षिमण्डल के नक्षत्र नहीं दीख पड़ते और छाया विपरीत दिशा * में पड़ती है। वह विश्वास दिलाता है कि ऐसी बात भारत में कभी नहीं होती जिस से उस की निरी अज्ञानता प्रकट होती है। एरैस्तोस्थेनीज उस की बात नहीं मानता और डिमाइमेकस पर अनभिज्ञता का दोष आरोपण करता है क्योंकि वह मेगास्थेनीज के ऐसा यह नहीं मानता कि भारतवर्ष में कहीं सप्तर्षिमण्डल का लोप होता है अथवा छाया विपरीत ओर पड़ती है।

दशम पत्रखण्ड।

प्लिनी-इतिहास।

सप्तर्षिमण्डल के अस्त होने के विषय में।

देश के भीतर प्रासिआइ (Prasii) के बाद मोनेडेस (Monedes) और सुआरी (Suari) जाति † रहते हैं जिन का मेलियस पर्वत (Malins) पर अधिकार है। इस पर बारी से

* सिकन्दर के समय के लेखक नियारकस ओनेसिक्राइटस और बीटो भी ऐसा ही कहते हैं। [डायोडोरस २, ३५, और प्लिनी-इतिहास, ६, २२, ६,।

† कनिङ्गहम साहब लिखते हैं कि प्लिनी के मोनेडस और सुआरी जाति पालीबोथ्रा के दक्षिण रहते थे। और आधुनिक मुण्डा तथा सुआरी जाति का वही निवासस्थान है। इस से निश्चय होता है कि ये वही प्राचीन मोनेडेस और सुआरी हैं। प्लिनी दूसरी जगह मण्डिआइ (Mandei) औ मैली (Malli) का वर्णन करता है। ये कलिङ्ग और गङ्गा के बीच में रहते थे।

छः मास जाड़े के दिनों में उत्तर छाया पड़ती है और गरमी में छः मास दक्षिण की ओर। बीटन (Beaton) का कथन है कि सप्तर्षिमण्डल (Bear) उस प्रान्त में वर्ष में केवल एक वार दिखाई पड़ता है, वह भी पन्द्रह दिनों से अधिक नहीं। मेगास्थेनीज कहता है कि ऐसा भारतवर्ष के कई प्रान्तों में होता है।

सोलिनस।

पालीबोथ्रा से आगे मेलियस पर्वत है जिसपर छाया जाड़े के दिनों में छः मास उत्तर की ओर पड़ती है और गरमी के दिनों में छः मास दक्षिण की ओर वर्ष में एकवार उस प्रदेश में उत्तरीय ध्रुव दृष्टिगोचर होता है। किन्तु पन्द्रह दिनों से अधिक नहीं जैसा, बीटन कहता है, कि कई प्रान्तों में होता है।

मेली के देश में एक पर्वत मेलस (Mallus) था जो मोनिडेस तथा सुआरी का मेलियस पर्वत समझा जा सकता है। कनिङ्ग-हम साहब का अनुमान है कि ये दोनों मन्दर पर्वत के लिये लिखेगये हैं जो भागलपुर के दक्षिण है। मण्डिआइ सम्भवत: महानदी के तट पर रहने वाले हैं। टौलेमी इस नदी को मनद कहता है। इस प्रकार मेली अथवा मेलिआइ और टौलेमी के मण्डली (Mandalae) एक ही हैं क्योंकि ये भी गङ्गा के दक्षिण कि तट पर पालीबोथ्रा के दक्खिन रहते थे। या मेली राजमहल के पहाड़िया होंगे जो मेलर (Maler) कहलाते हैं। प्लिनी के सुआरी और टौलेमी के सबरी (Sabarrae) आजकल के जङ्गली शवर हैं जिन का कोई निश्चित घर नहीं रहता। ये जङ्गलों में रहते हैं और लकड़ी काटनी इन की जीविका है।

एकादश पत्रखण्ड ।

भारतवर्ष के उर्वरत्व के विषय में।

मेगास्थनीज़ भारतवर्ष की उपजशक्ति वर्णन करता है। वह कहता है कि यहां वर्ष में दो बार फल और अन्न उत्पन्न होते हैं। [एरैटोस्थनीज़ भी यही लिखता है। वह कहता है कि जाड़े और गरमी दोनों ऋतुओं में वर्षा होती है और बीज बोया जाता है। किसी वर्ष ऐसा नहीं होता कि दोनों ऋतुओं में जल न बरसे। इस से अत्यधिक उपज होती है क्योंकि भूमि बहुत उर्वरा है वृक्षों से भी बहुत फल निकलता है। और पौधों की जड़, विशेष कर के लम्बी डांट वाले छड़ियों का स्वभावतः तथा उबाल पड़ने पर मधुर होते हैं। वर्षा अथवा नदी के जल से इन की पुष्टि होती है और सूर्य्य की किरणों से इन में गरमी पहुंचती है जिस से इन में उबाल पड़ता है। एरैटोस्थनीज़ यहां एक विचित्र शब्द का प्रयोग करता है। जिस को दूसरे फल अथवा पौधों का पक्व होना कहते हैं उसे भारतवासी उबाल पड़ना (Coction) कहते हैं। क्योंकि उस से ऐसा उत्तम स्वाद फलों में आ जाता है जैसा आग पर उबाल देने से। वही लेखक कहता है कि वृक्षों की शाखाओं में नम्रता जल की गरमी से होती है। उन के पहिये बनाये जाते हैं। यहां ऐसे भी वृक्ष हैं जिन पर ऊन उत्पन्न होता है।]

एरैटोस्थनीज और स्ट्रेबो ऐसी बड़ी २ नदियों के वाष्प से तथा इटीसिया से आये हुए (जल युक्त) आंधियों से, एरैटोस्थनीज कहता है कि भारतवर्ष में ग्रीष्म कालीन वर्षा होती है जिस से वहां की समतल भूमि भर जाती है। इसी वर्षाकाल में सन,

बाजरा, कोदो, सरसो, धान, और बोस मौरम बोया जाता है और शीतकाल में गेहूं, यव, दाल तथा अन्य खाद्यफल बोये जाते हैं जो हम लोगों को ज्ञात नहीं हैं।

द्वादश पत्रखण्ड ।

स्ट्रेबो, भारतवर्ष के कुछ वन्य जन्तुओं के विषय में। मेगास्थेनीज के अनुसार सब से बड़े २ व्याघ्र प्रसिआई (Prasii) देश में पाये जाते हैं। ये आकार में सिंह के दूना होते हैं और बड़े बलिष्ट होते हैं। एक पोसुए व्याघ्र को चार मनुष्य लिये जाते थे, उस ने अपने पिछले पञ्जे से एक खच्चर को पकड़ कर और उसे विवश कर के अपने पास खींच लिया।

बन्दर कुत्तों से बड़े होते हैं। वे उजले होते हैं किन्तु उन का मुंह काला होता है, यद्यपि दूसरी जगहों में इस के प्रतिकूल भी पाया जाता है। इन की पूंछ दो हाथ से अधिक लम्बी होती है। ये बड़े सीधे होते हैं और इन का स्वभाव दुष्ट नहीं है। वे मनुष्यों पर आक्रमण नहीं करते न चोरी ही करते हैं। पृथिवी से पत्थर खोद कर निकाले जाते हैं जो लोबान के रङ्ग के होते हैं और जिन में अञ्जीर अथवा मधु से भी अधिक मधुरता होती है। इस देश के किसी २ भागों में दो हाथ लम्बे सांप हैं जिन्हें चमगीदड़ों के ऐसा चमड़े के समान पतले पांख होते हैं। वे रात के समय चारो ओर उड़ते हैं और मूत्र अथवा पसीने के बिन्दु गिराते हैं जिस से अनवधान मनुष्यों के चमड़े पर फफोले पड़ कर बुरे घाव निकल आते हैं। पक्ष युत बिच्छू भी असाधारण आकार वाले यहां होते हैं। आबनूस यहां उत्पन्न होता है। कुत्ते भी यहां बड़े साहसी और बलशाली होते हैं और बिना नाक में जल डाले वे अपनी पकड़ नहीं

छोड़ते। वे इतने उत्साह से काटते हैं कि किसी की आंखें बिगड़ जाती हैं और कितनों की आंखें निकल पड़ती हैं। एक कुत्ते ने एक सांढ़ तथा एक सिंह को पकड़ रक्खा था।

कुत्ते ने सांढ़ का मुंह पकड़ा था और उस से छुड़ाने के पहले ही सांढ़ मर गया।



त्रयोदश पत्र खण्ड * ।

ईलियन—इतिहास

भारतवर्षीय वनमानुष के विषय में ।

मेगेस्थेनीज़ कहता है कि प्रसिआइ † भारत को

---

* पत्र खण्ड त्रयोदश (क)

ईलियन—इतिहास ।

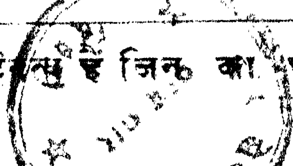
भारतवर्षीय वनमानुष के विषय में ।

भारतवर्ष में प्रसिआइ जाति के देश में एक प्रकार के वनमानुष होते हैं जिन्हें मनुष्यों के समान बुद्धि होती है और जो देखने में हरकेनिया के कुत्तों के बराबर होते हैं। प्रकृति ने इन्हें जट दिया है जिसे सत्यवात नहीं जानने वाला कृत्रिम समझ सकता है। उन की ठुड्डी सेटर (Satyr *) के समान ऊपर की ओर फिरी रहती है और लाङ्गूल सिंह की बलिष्ठ पूंछ की ऐसा होता है। उन का समस्त शरीर श्वेत होता है, केवल मुख और यंस की नाक लाल होता है। व बड़े बुद्धिमान और स्वभाव से पोस माननेवाले होते हैं। वे जङ्गलों में पाले जाते हैं, जहां वे स्वयम् भी रहते हैं और पहाड़ पर के जंगली फलों को खा कर जाते हैं। वे बहुत से एकत्र हो भारतवर्षीय लैटेज (Latage) नामक नगर के निकट जाते हैं यहां राजा की आज्ञा से उन के लिये चावल रखा रहता है। वस्तुतः प्रत्येक दिन संस्कृत भोजन उन के लिये रखा जाता है। लोग कहते हैं कि वे भोजन कर लेने के उपरान्त शिक्षित रीति से जंगलों में जाते हैं और राह में किसी वस्तु की हानि नहीं करते।

† प्राच्य को स्ट्रेबो, एरियन और प्लिनी प्रसिआइ कहते हैं, प्लुटार्क और इलियन प्राक्सिआई, कर्टिअस फर्रसिआई कहते हैं।

---

* सेटर ((Satyr) एक देवता है जिन का आधा शरीर मनुष्य आधा बकरी का है।



एक जाति है। उस के देश में बड़े २ कुत्तों के बराबर वनमानुष होते हैं। उन की पूंछें पांच हाथ लम्बी होती हैं, ललाट पर भी उन के बाल जमता है और लम्बी दाढ़ी छाती तक लटकती है। मुख एकदम श्वेत तथा अन्य भाग शरीर का काला होता है। वे पोसने योग्य एवम् मनुष्यों से प्रीति करने वाले होते हैं और अन्यदेशीय वनमानुषों के ऐसा उन का स्वभाव दुष्ट नहीं होता।

चतुर्दश पत्र खण्ड

ईलियन—इतिहास।

पक्षयुत बिच्छू और सर्पों के विषय में।

मेगीस्थनीज़ कहता है कि भारतवर्ष में बड़े २ पांख वाले बिच्छू होते हैं जो यूरोपीय मनुष्यों तथा वहां के निवासियों को भी डङ्क मारते हैं। वहां सर्प भी ऐसे हैं जिन्हें पांख हैं। ये दिन में बाहर नहीं निकलते, किन्तु रात को बाहर होते हैं और ये मूत्र गिराते हैं, जिस के चमड़े पर गिरने से उसी क्षण बुरे घाव निकल आते हैं।

पञ्चदश पत्र खण्ड।

स्ट्रेबो।

भारतवर्ष के पशु और लम्बे वृक्षों के विषय में।

मेगीस्थनीज़ कहता है कि कितने बन्दर ऐसे हैं जो चट्टान गिराते हैं। ये एक दम ढालुए स्थलों पर भी चढ़ जाते हैं और वहां से अपने पीछा करनेवालों पर पत्थर बरसाने लगते हैं। वह कहता है कि बहुत से जन्तु जो हमलोगों के यहां घरेले हैं वे भारतवर्ष में जङ्गली हैं। वह ऐसे घोड़ों का वर्णन करता है जिन्हें एक सींग होता है और सिर हरिण के समान होता है।

वह कहता है कि कुछ लम्बे वृक्ष सोधे तोन औगियां * तक ऊपर जाते हैं और दूसरे भूमि पर पड़े हुए पचास औगियां तक बढ़ते हैं। ये तीन से छः हाथ तक मोटे होते हैं।

पञ्चदश (क) पत्र खण्ड

ईलियन—भारतवर्ष के कुछ पशुओं के विषय में।

लोग कहते हैं कि भारतवर्ष के मध्यवर्ती मण्डलों में कितने अगम्य पर्वत हैं जिन पर वन्य पशु विचरते हैं। वहां हमारे देश के पशुओं के समान जन्तु भी जाते हैं पर वे जङ्गली हैं। कहा जाता है कि भेड़ी कुत्ते बकरे और बैल स्वेच्छानुसार जङ्गलों के ऐसा घूमते फिरते हैं क्योंकि वे स्वतन्त्र हैं और गड़रिये आदिकों के वश में नहीं हैं। भारतवर्ष के वृत्तान्त लिखने वाले इस बात को स्वीकार करते हैं कि वे असंख्य हैं। और येही नहीं किन्तु उस देश के विद्वान् पुरुष भी जिन में ब्राचमन †(Brachmans) मान्य है, यही बात सिद्ध करते हैं। यह भी कहा जाता है कि भारत में एक सींग वाले जन्तु होते हैं जिन्हें भारतवासी कर्टज़ोन कहते हैं। यह पूर्ण युवा घोड़े के आकार का होता है। इसे चोटी होती है और इस का बाल पीला तथा ऊन के ऐसा कोमल होता है। इस के पैर बड़े सुन्दर और वेगवाले होते हैं। इन में गांठ नहीं होता और हस्ति के पैर के समान इस का गढ़न होता है। इस की पूंछ शूकर की पूंछ के सदृश होती है। इस के भौओं के बीच से एक सींग निकलता है।

* एक औगियां चार हाथ के तुल्य होता है।

† सम्भवतः ये ब्राह्मण हैं

यह सोया नहीं होता किन्तु स्वाभाविक रूप से ऐंठा रहता है। यह रंग में काला और अत्यन्त तीक्ष्ण होता है। जैसा हम ने सुना है इस जन्तु की बोली अत्यन्त कर्कश और उग्र होता है। अन्य जन्तुओं को यह अपने निकट आने देता है और उन से अच्छा व्यवहार करता है, किन्तु लोग कहते हैं कि अपनी जाति से यह झगड़ता है। इस जाति के नर जन्तुओं को लड़ने की स्वाभाविक इच्छा होती है। ये केवल नर ही से नहीं किन्तु मादे से भी सींग अड़ा कर लड़ते हैं और जब तक पराजित प्रतिद्वन्द्वी मर नहीं जाता तब तक नहीं छोड़ते। इस का सारा शरीर वैसा बलवान् नहीं होता पर इस के सींग में इतनी शक्ति रहती है कि कुछ भी उसे रोक नहीं सकता। एकान्त स्थान में चरना और घूमना इसे रुचिकर है। परन्तु उपयुक्त ऋतु में यह स्त्रियों का संग खोजता है और प्रीति पूर्वक उन से व्यवहार करता है। कभी २ दोनों एक साथ चरते भी हैं। यह ऋतु बीत जाने पर जब स्त्रियां गर्भवती हो जाती हैं तब वह भी क्रूर हो जाता है और निर्जन स्थान खोजने लगता है। इस के बच्चे प्रसिआई के राजा के पास लाये जाते हैं और सार्वजनिक तमाशों में लड़ाये जाते हैं। पूर्ण हुआ लोगों को स्मृति भर में कभी पकड़ा नहीं गया है।

(२१) यह कहा जाता है कि जो यात्री उन पर्वतों को लांघता है, जो समुद्र से बहुत दूर भारतवर्ष की सीमा पर है, उसे कोरूडा (Korouda) मण्डल में घने जङ्गल से ढंके गुप्त नाले मिलते हैं। यहां एक विचित्र प्रकार के जन्तु आते हैं। जिन की आकृति सेटर (Satyr) के समान होती है। इन का सारा शरीर बड़े २ बालों से छिपा रहता है और घोड़े के ऐसा

इन्हें पूंछ होती है। जब तक इन्हें छेड़ा नहीं जाता तब तक ये झाड़ियों में फल खाकर रहते हैं। किन्तु जब ये आखेटकों का हल्ला और कुत्तों का भूंकना सुनते हैं तब बड़े वेग से ढालुए पर चढ़ जाते हैं, क्योंकि उन्हें पर्वत पर चढ़ने का अभ्यास है। वहां से वे अपने शत्रुओं पर चट्टान गिरा कर अपनी रक्षा करते हैं इस से जिन को चोट लगती है वे मर भी जाते हैं। जो जन्तु पत्थल गिराते हैं उन का पकड़ना सब से कठिन है। लोग कहते हैं कि कुछ जन्तु बड़ी कठिनता से और बहुत दिनों के बाद पकड़ कर प्रसिआइ के निकट लाये गये थे, किन्तु ये सब रोगग्रस्त थे अथवा गर्भवती मादा थीं। रुग्ण जन्तु दुर्बल होने के कारण भागने में असमर्थ थे और गर्भयुक्त जन्तु पेट के बोझ से दौड़ नहीं सकते थे।

षष्ठदश पत्र खण्ड।

प्लिनी—अजगर के विषय में।

मेगास्थेनीज़ के अनुसार भारतवर्ष में अजगर इतने बड़े २ होते हैं कि वे हरिण और सांढ़ को सम्पूर्ण निगल जाते हैं।

सोलिनस।

अजगर इतने बड़े २ होते हैं कि हरिण तथा अन्य उस के तुल्य जन्तुओं को एकदम निगल जाते हैं।

सप्तदश पत्र खण्ड।

ईलियन—विद्युत् युक्त मछली के विषय में।

मुझे मेगास्थेनीज़ से ज्ञात हुआ है कि भारतवर्षीय समुद्र में एक प्रकार की छोटी मछलियां होती हैं जो जीवित कभी

नहीं देखी जाती हैं, क्योंकि वे सदा अधिक जल में तैरती हैं और जब मरती हैं तभी जल के ऊपर उतराती हैं। यदि कोई मनुष्य उन्हें छूता है तो वह संज्ञाशून्य हो जाता है और अन्त में मर भी जाता है।

अष्टादश पत्रखण्ड।

प्लिनी—तप्रोबेन * (Taprobane) के विषय में।

मैगास्थनीज़ कहता है कि एक नदी तप्रोबेन को भारतवर्ष से पृथक् करती है। वहां के निवासी पैलायी गोनाय †(Palaio-gonoi) कहलाते हैं और इस देश में सुवर्ण और मोती भारत-वर्ष से अधिक होता है।

---

* यह द्वीप अनेक नाम से पुकारा गया है।

(१) लङ्का—संस्कृत ग्रन्थों में यह नाम प्रसिद्ध है किन्तु ग्रीक तथा रोमन लोगों को यह एकदम ज्ञात नहीं था।

(२) सिमण्डु (Simundu) या पलेसिमण्डु (Palesimundu) सम्भवत: पाली सीमन्त का अपभ्रंश है। टौलेमी के समय के पूर्व ही यह व्यवहार से उठ गया था।

(३) तप्रोबेन—संस्कृत ताम्रपर्णी का अपभ्रंश समझा जाता है। पाली में यह ताम्बपन्नी कहलाता है और अशोक के गिरनार वाले शिलालेख में यह लिखा है।

(४) सेलाइस, सेलाइन, सेरेनडोस, सिरलेडीवा, सैरेनडीव, सीलन, सीलोन ये सब सिंहल के अपभ्रंश हैं। जिस द्वीप से निकला है।

† पालोजनाः का अपभ्रंश प्रतीत होता है।

सोलिनस।

तप्रोबेन और भारतवर्ष के मध्य एक नदी बहती है जो दोनों को पृथक् करती है। इस के एक भाग में भारतवर्ष से भी बड़े २ हस्ति और अन्य जङ्गली पशु रहते हैं और दूसरे भाग पर मनुष्य का आधिपत्य है।

एकोनविंशत पत्रखण्ड।

ऐण्टिगोनस—जलवृक्षों के विषय में।

इण्डिका (Indika) का प्रणेता मेगास्थनीज़ कहता है कि भारतवर्ष के समुद्र में वृक्ष उपजते हैं।

विंशत पत्रखण्ड।

एरियन—सिन्धु और गङ्गा के विषय में।

[एरियन का अनुवाद देखो।]

विंशत (क) पत्रखण्ड।

प्लिनी।

प्रोनस (Prnas) और केनस (Cainas) [गङ्गा की एक उपशाखा] दोनों नदियां जलयान चलाने योग्य हैं। गङ्गा के निकट रहने वाले समुद्र के समीप कलिङ्गी * (Calingae) जाति हैं। कुछ और ऊपर मण्डियाइ और मैली निवास करते हैं जिन के देश में मैलस पर्वत है। इन सब प्रान्तों की सीमा गङ्गा है। कुछ लोगों ने कहा है कि यह नदी भी नाइल के समान अज्ञात स्थान से निकलती है और उसी प्रकार जिधर से हो कर वह बहती है उधर समस्त देश को बढ़ाती है। किन्तु कुछ लोगों का विचार है कि यह स्काइथिया के पर्वतों से निकली है। इस में उन्नीस नदियां गिरती हैं जिन में उपर्युक्त के

---

* ये गोदावरी और महानदी के बीच में बसते थे।

अतिरिक्त कोन्डोचिटोश, एरीबोअी आस, कोसीएगस, और सोनस जलयान चलाने योग्य हैं। अन्य मनुष्यों का कथन है कि यह गर्जती हुई एकाएक झरने से निकलती है और एक ढालुए पहाड़ी स्थान से गिरती हुई ज्यों ही समभूमि पर पहुंचती है वैसे ही एक झील में प्रवेश कर जाती है। वहां से यह धीमे प्रवाह से बहती है और किसी स्थान में आठ मील से कम चौड़ी नहीं है। सब मिला कर देखने से इस की चौड़ाई सौ स्टेडियम होती है और कम से कम इस की गहराई बीस फेदम * है।

सोलिनस।

भारतवर्ष में सब से बड़ी नदियां गङ्गा और सिन्धु हैं कुछ लोगों का कथन है कि गङ्गा अज्ञात स्थान से निकलती है और नाइल के सदृश अपने तटस्थ स्थलों को धोती है। किन्तु कुछ लोग सोचते हैं कि यह स्कोदिया के पर्वतों से निकलती है। भारतवर्ष में एक बड़ी नदी हुपेनिस † (Hwpanis) भी है जहां तक सिकन्दर चढ़ कर गया था। इस के किनारे जो स्तूप बने थे उन्हीं से यह ज्ञात होता है। गंगा की चौड़ाई कम से कम आठ मील और अधिक से अधिक बीस मील है। इस की गहरापन जहां सब से कम है वहां सौ फीट है।

पत्रखण्ड।

कुछ लोग कहते हैं कि कम से कम (गङ्गा की) चौड़ाई तीस स्टेडियम है और अन्य केवल तीन ही स्टेडियम बताते हैं। मेगस्थनीज़ कहता है कि सब मिला कर औसत चौड़ाई सौ स्टेडियम है और कम से कम बीस औगिया यह गहरी है।

---

* एक फेदम छः फीट के बराबर होता है।

† हुफिसिस अथवा सतलज भी।

एकविंशत पत्रखण्ड।

एरियन—सिलास नदी के विषय में

[आगे एरियन का अनुवाद देखो]

द्वाविंशत पत्रखण्ड।

बोयास्सनेड—सिलास नदी के विषय में।

भारतवर्ष में सिलास नामक एक नदी है। जिस झील से यह निकली है उसी के नाम के अनुसार इस का नाम पड़ा है। जो कुछ इस में फेंका जाता है वह उतराता नहीं, किन्तु प्राकृतिक नियम के प्रतिकूल नीचे बैठ जाता है।

त्रयोविंशत पत्रखण्ड।

स्ट्रेबो—सिलास नदी के विषय में।

(मेगास्थनीज़ कहता है कि) पहाड़ी प्रदेश में सिलास नामक एक नदी है जिस पर कुछ नहीं उतराता। डिमो क्रीटस, जिस ने एशिया के अधिकांश भागों पर भ्रमण किया था, इस बात का अविश्वास करता है और एरिस्टाटल भी इसे नहीं मानता।

चतुर्विंशत पत्रखण्ड।

एरियन—भारतवर्षीय नदियों की संख्या के विषय में।

[एरियन का अनुवाद देखो]

द्वितीया भाग।

पञ्चविंशत पत्रखण्ड।

स्ट्रेबो—पाटलीपुत्र नगर के विषय में।

मेगास्थनीज़ के अनुसार गङ्गा की औसत चौड़ाई सौ स्टेडियम और इस का गहिरापन कम से कम बीस फैदम है। जहां इस नदी में एक दूसरे नदी का सङ्गम हुआ है वहीं पालीबोथ्रा स्थित है। यह नगर अस्सी स्टेडियम लम्बा और पन्द्रह चौड़ा है। इस का आकार चतुर्भुज है और काठ की भीत से घिरा हुआ है, जिस में तीर छोड़ने के लिये छिद्र बने हुए हैं। इस के सामने इस की रक्षा के लिये एक गर्त है, जिस में नगर के नालियों का जल गिरता है। जिस जाति के देश में यह नगर स्थित है वह भारतवर्ष में सब से विख्यात है। यह प्रसिआई कहलाती है। राजा को पालीबोथ्रा का उपनाम धारण करना पड़ता है, जैसा सन्ड्रकोट्टस ने किया था, जिस के यहां मेगास्थनीज़ राजदूत बना कर भेजा गया था [यह प्रथा पार्थियन लोगों में भी प्रचलित है, क्योंकि वहां के सभी नरेश अरसाका (Arasaka) कहलाते हैं, यद्यपि सभों का अपना२ विशेष नाम है। यथा आरोडीस, फ्राटीस, इत्यादि।]

अनन्तर यह लिखा है :—

हपानिस नदी के बाद का सब देश समझा जाता है कि बहुत उर्वर है, किन्तु पूर्ण रूप से इस के विषय में कुछ ज्ञात नहीं है दूर तथा अज्ञात होने के कारण इस देश के विषय में सब बात बढ़ा कर अथवा विचित्र बनाकर कही जाती है।

कथाएं कही जाती हैं कि चींटियां सोना खोद कर निकालती हैं, मनुष्य तथा पशु विचित्र स्वरूप के होते हैं और अद्भुत गुण धारण करते हैं, सीरेस * (Seres) दो दो सौ वर्ष तक जीते हैं। वे उच्चजातितंत्र-राज्य-प्रणाली का वर्णन करते हैं, जिस में पांच सहस्र विचारकर्त्ता हैं। उन में से प्रत्येक राज्य को एक हाथी देता है।

मेगास्थनीज़ कहता है कि सब से बड़े व्याघ्र प्रसिआई के देश में पाये जाते हैं इत्यादि। (द्वादश पत्रखण्ड देखो)।

षष्टविंशत पत्रखण्ड।

एरियन इण्डिका।

पाटलीपुत्र और भारतवासियों के स्वभाव के विषय में।

और भी यह कहा जाता है कि भारतवासी मृत मनुष्यों की स्मृति के लिये स्तूप आदि निर्माण नहीं करते और समझते हैं कि मनुष्यों के सद्गुण जो उन्हों ने अपने जीवन में दिखलाये हैं, और गीतें, जिन में उन का यश वर्णित है, ये मरण के उपरान्त उन की कीर्ति स्थायी करने के लिये पर्य्याप्त हैं। किन्तु उन के नगर इतने अधिक हैं कि लोग कहते हैं उन की संख्या निश्चित रूप से नहीं कही जा सकती। जो नगर नदी अथवा समुद्र के किनारे बसे हैं वें ईंट के बदले काठ के बने होते हैं। ये थोड़े ही दिनों तक ठहरने के तात्पर्य से बनाये जाते हैं, क्योंकि घोर वृष्टि तथा पार्श्ववर्ती समभूमि को डुबा देने वाले

---

* किसी जाति विशेष का नाम नहीं है; किन्तु उस देश के निवासियों के लिये आया है, जहां रेशम होता था। सीर = रेशम।

बाढ़ से बड़ी हानि होती है। और जो नगर सुरक्षित एवम् ऊंचे स्थानों पर बसते हैं वे ईंट तथा मिट्टी से निर्म्मित होते हैं। सब से बड़ा नगर भारतवर्ष में पालीबोथ्रा है। यह प्रसियन लोगों के राज्य में है। यह गङ्गा तथा एरान्नोबोआस के सङ्गम पर स्थित था। गङ्गा सब नदियों से बड़ी है और एरान्नोबोआस (Erannoboas) भारतवर्ष के सब से बड़ी नदियों में तृतीय है तथापि अन्य देश के बड़ी से बड़ी नदियों से भी बड़ी है। किन्तु यह गङ्गा से छोटी है जिस में यह गिरती है। मेगास्थनीज़ कहता है कि इस नगर की बस्ती बड़ी लम्बी थी। दोनों ओर अस्सी स्टेडियम तक यह फैली हुई थी। इस की चौड़ाई पन्द्रह स्टेडियम थी और जो गर्त इस के चतुर्दिक् था वह छः सौ फीट चौड़ा और तीस हाथ गहरा था। और इस की भीत पर पांच सौ सत्तर दुर्ग थे और उस में चौसठ द्वार बने थे। वही लेखक यह ध्यानयोग्य बात कहता है कि सभी भारतवासी स्वतंत्र हैं और उन में एक भी दास (गुलाम) नहीं है। यहां तक लेकिडिमोनियन और भारतवासी में सभ्यता है, किन्तु लैकिडीमन हेलट (Helot) को दास बना कर रखते हैं, जो उन के तुच्छ कामों को किया करते हैं। पर भारतवासी विदेशी से भी गुलाम के ऐसा व्यवहार नहीं करते, अपने देशवासी के साथ कहां तक करेंगे।

सप्तविंशत पत्रखण्ड।

स्ट्रेबो—भारतवासियों के स्वभाव के विषय में।

भारतवासी उचित व्यय के साथ रहते हैं, विशेष करके जब वे शिविर में निवास करते हैं। वे अशिक्षित मनुष्यों की भीड़

पसन्द नहीं करते, इस लिये स्वयम् नियमों का भली भांति पालन करते हैं। चोरी अत्यन्त कम होती है। मेगास्थेनीज़ कहता है कि सन्द्रकोट्टस के शिविर में चार लक्ष मनुष्य थे, किन्तु शिविर में रहनेवाले किसी दिन दो सौ ड्राक्मा से अधिक की चोरी नहीं सुनते थे। यह भी ऐसे मनुष्यों में है, जिन्हें कोई लिपिबद्ध नियम नहीं है और जो लिखने नहीं जानते, जिस कारण से उन्हें स्मरणशक्ति पर अधिक निर्भर करना पड़ता है। तथापि वे पूर्ण सुख से रहते हैं, क्योंकि उन के स्वभाव सरल होते हैं और वे व्यय कम करते हैं। वे यज्ञ का समय छोड़ कर और कभी मद्य नहीं पीते। वे अपने पीने के लिये चावल से मद्य बनाते हैं, यव से नहीं। उन के खाने का पदार्थ भात और दाल है। उन के कानून तथा प्रतिज्ञापत्र की सरलता इसी बात से प्रमाणित होती है कि वे अत्यन्त कम न्यायालय की शरण लेते हैं। उन के यहां जमानत अथवा जमा रुपये के सम्बन्ध में कोई अभियोग नहीं होता, न उन्हें मुद्रा या साक्षियों की आवश्यकता होती है। वे थोड़ी रुपये जमा करते और एक दूसरे में विश्वास रखते हैं। वे अपने धन तथा गृहों को साधारणतः अरक्षित छोड़ जाते हैं। इन सभों से विदित होता है कि वे शान्तिप्रिय और उत्तम बुद्धिवाले होते हैं। किन्तु कितने काम वे करते हैं जो समर्थन करने योग्य नहीं हैं। जैसे वे सदा अकेले भोजन करते हैं; उन के लिये कोई समय निश्चित नहीं है जिस समय सब कोई भोजन करें; जिस को जब इच्छा होती है तभी वह खाता है। सामाजिक तथा जातीय जीवन के लिये इस के प्रतिकूल प्रथा प्रचलित करना अधिक श्रेय होगा।

शरीर में धक्का लगा कर व्यायाम करने की प्रथा उन को बहुत प्रिय है। यह कई प्रकार से होता है, पर विशेषतः आबनूस की

चिकने कुन्दे शरीर पर चला कर ये कसरत करते हैं। इन की समाधि (क़ब्र) सादी होती है और मृतकों के ऊपर चबूतरा ऊंचा नहीं उठाया जाता है। अपने जीवन की सरलता के विरुद्ध वे आभूषण और चमक दमकवाले पदार्थ पसन्द करते हैं। उन के कपड़ों पर सोना का काम किया रहता है और उन में बहुमूल्य पत्थर जड़े रहते हैं। वे अत्यन्त झीने मलमल के फूलदार वस्त्र भी धारण करते हैं। उन के अनुगामी सेवक उन्हें छत्री लगाये चलते हैं। सौन्दर्य्य का वे अधिक विचार रखते हैं और प्रत्येक प्रकार से अपनी शोभा बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं। सत्य और सद्गुण का वे समान आदर करते हैं। अतएव वे वृद्धों को विशेष अधिकार नहीं देते, जब तक उन के पास अधिक बुद्धिमत्ता नहीं पायी जाती है। वे अनेक स्त्रियों से विवाह करते हैं। इन के माता पिता को दो बैल देकर वे इन्हें क्रय करते हैं। कुछ स्त्रियों को योग्य सहायक समझ कर वे उन से विवाह करते हैं और दूसरों को पुत्रोत्पादन एवम् आनन्द करने के लिये ग्रहण करते हैं। स्त्रियों को सतीत्व रक्षा करने के लिये लाचार नहीं करने पर वे कुलटा हो जाती हैं। बलिदान अथवा मद्य चढ़ाने के समय कोई मुकुट नहीं धारण करता। जिस को बलि देते हैं उसे छूरे आदि से भोंकते नहीं, किन्तु गला दबा कर प्राण लेते हैं, जिस में देवता को कोई विदीर्ण वस्तु नहीं अर्पित हो।

झूठी गवाही देने के लिये अभियोग प्रमाणित होने पर, अभियुक्त के हाथ और पैर काट लिये जाते थे। * जो मनुष्य

---

* अंगरेजी में Suffers mutilation of his extrimities लिखा है। इस का अनुवाद यही ठीक जंचता है।

किसी का कोई अङ्ग काट लेता है उस का भी दण्डस्वरूप से वही अङ्ग और हाथ भी काट लिये जाते हैं। यदि कोई किसी शिल्पकार को हाथ अथवा आंख विहीन करता है तो उसे प्राण-दण्ड दिया जाता है। वही लेखक कहता है कि भारतवासी दास नहीं नियुक्त करते! [किन्तु आनेसिक्राइटस का कथन है कि यह विशेषता उस प्रान्त में थी जहां मुसिकेनस राज्य करता था। †]

राजा के शरीर की रक्षा का भार स्त्रियों पर रहता है। इन के माता पिता से ये क्रय की जाती हैं। राजा के सैनिक रक्षक और अवशिष्ट सारी सेना फाटक के बाहर राजा का अनुगमन करती है। जो स्त्री मद्य से मतवाले राजा का प्राणघात करती है उस से राज्य पानेवाला विवाह करता है। पुत्र पिता की सम्पत्ति प्राप्त करते हैं। राजा दिन के समय नहीं सो सकता और रात को उसे समय समय पर शय्या बदलनी पड़ती है, जिस में उस के प्राणापहरण करने के लिये षडयन्त्र विफल हो।

राजा केवल युद्ध ही के समय नहीं किन्तु न्याय करने के लिये भी महल छोड़ कर बाहर जाता है। तब वह न्यायालय में दिन भर रहता है और विचार के कार्य में क्षति नहीं होने देता, यद्यपि उस के शारीरिक कृत्य का भी समय हो जाता है। इस समय वह काठ के खोखले डन्डे से अपना शरीर मर्दन कराता है। वह अभियोग सुनता रहता है जिस समय चार अनुचर उस का शरीर दबाते रहते हैं। दूसरे यज्ञ करने के लिये भी वह महल छोड़ता है। तीसरे आखेट करने के समय भी जब वह बैकेनेलियन के ढङ्ग से प्रस्थान करता है,

† इस का राज्य सिन्धु नदी के किनारे था।

स्त्रियों के समूह में वह घिरा रहता है। इस के बाद बर्छाधारी सैनिक रहते हैं। सड़क रस्से से घिरा रहता है और रस्से के भीतर जाने से मनुष्य और स्त्री दोनों के प्राण लेलिये जाते हैं। ढोल और घण्टे के साथ मनुष्य आगे २ चलते हैं। घिरे स्थानों में राजा आखेट करता है और मचान पर से तीर छोड़ता है। उस के समीप दो तीन शस्त्रधारिणी स्त्रियां खड़ी रहती हैं। जब वह खुले स्थान में मृगया खेलता है तब हाथी पर चढ़ कर तीर चलाता है। स्त्रियां कुछ रथ, कुछ घोड़े और कुछ हाथियों पर भी रहती हैं। वे प्रत्येक प्रकार के अस्त्रशस्त्र से सुसज्जित रहती हैं, मानो लड़ने के लिये जाती हों। *

[ये सब आचार हमारे देश के आचारों को मिलाने से अद्भुत ज्ञात होते हैं, किन्तु निम्न प्रथाएं तो और भी आश्चर्यजनक हैं।] मेगास्थनीज़ कहता है कि काकेशस (Kaukasus) के निवासी सब के सामने स्त्रियों के साथ सङ्गम करते हैं और अपने सम्बन्धियों का मांस खाते हैं †। वहां ऐसे बन्दर हैं जो पत्थर गिराते हैं इत्यादि। (इस के बाद पञ्चदश और एकोनविंशत पत्रखण्ड लिखा है।)

पत्रखण्ड सप्तविंशत(क)।

ईलियन।

भारतवासी न सूद पर रुपये देते हैं और न कर्ज लेना

---

* अभिज्ञान शाकुन्तल नाटक में राजा दुष्यन्त यवनस्त्रियों के साथ आखेट करने गया है और जङ्गली पुष्पों की माला धारण किये हुए दिखलाया गया है।

† इन दोनों प्रथाओं को हेरोडोटस ने भी लिखा है।

जानते हैं। किसी की क्षति करनी या क्षति सहनी भारतवर्ष के आचार के विरुद्ध है अतएव वे न किसी से पण करते हैं और न ज़मानत मांगते हैं।

पत्रखण्ड सप्तविंशत (ख)

निकोलास डमसकस।

भारतवासियों में जो मनुष्य जमा किया हुआ अथवा कर्ज़ दिया हुआ रुपया फेर नहीं ले सकता उस के लिये कानून के अनुसार कोई उपाय नहीं है। रुपयावाला अपना दोष देने के अतिरिक्त कुछ कर नहीं सकता।

पत्रखण्ड सप्तविंशत (ग)

निकोलास डमसकस।

जो मनुष्य किसी शिल्पकार की आंख फोड़ देता है अथवा हाथ काट लेता है उसे प्राणदण्ड दिया जाता है। जो मनुष्य घोर दुष्कर्म करता है उस का शिर मुंड़वा देने की राजा आज्ञा देते हैं। इस प्रकार का दण्ड सब से बड़ा धिक्कार समझा जाता है।

अष्टाविंशत पत्रखण्ड।

एथेन।

भारतवासियों के खाने के विषय में।

मेगास्थनीज अपने इण्डिका के द्वितीय खण्ड में कहता कि भारतवासियों के खाने के समय उन के सम्मुख एक त्रिपाद के ऐसा टेबुल रखा जाता है। उस पर सोना का एक कटोरा

रखा जाता है। इस में वे पहले चावल देते हैं। जिस प्रकार हम लोग यव उसनते हैं उसी प्रकार यह उसना रहता है। इस के उपरान्त नाना प्रकार के व्यञ्जन भारतवर्ष की चाल के बने हुए परोसे जाते हैं।

एकोनविंशत पत्रखण्ड। *

स्ट्रेबो।

काल्पनिक जातियों के विषय में।

किन्तु काल्पनिक बातों को कहते हुए वह वर्णन करता है कि वहां मनुष्य पांच बीता और तीन बीता ऊंचे भी हैं। इन में से कुछ मनुष्यों को नाक नहीं है केवल मुख के ऊपर स्वांस लेने के लिये दो छिद्र हैं। होमर कवि ने अपने काव्य में

---

* स्ट्रेबो :— डिमाइमेकस और मेगास्थनीज विशेष कर के विश्वास करने योग्य नहीं हैं। ये ही कथाएं कहते हैं कि मनुष्य अपने कानों में सोते हैं, मनुष्यों के मुख नहीं होते, मनुष्यों को नाक नहीं होती, मनुष्यों को एक ही आंख होती है मनुष्यों के बड़े लम्बे पैर होते हैं अथवा मनुष्यों के अंगूठे पीछे की ओर फिरे रहते हैं। इन्हों ने होमर की कल्पित कथा फिर से निकाली कि सारस और पिग्मी, जो केवल तीन ही बित्ते के होते वे उन में युद्ध होती है। इन्हों ने सोना खोद कर निकालने वाली चीटियों के विषय में कहा है। ये कहते हैं कि मन देवताओं के शिर नोकीले होते हैं, और सर्प बैल तथा हरिण को सींग के साथ निगल जाते हैं। एरेटोस्थनीज कहता है कि ये दोनों एक दूसरे को झूठा भी बनाते हैं।

लिखा है कि तीन बित्ता के मनुष्यों से साथ सारस और तीतर युद्ध करते हैं। ये तीतर हंस के बराबर होते हैं। इस जाति के मनुष्य * सारसों के अण्डे एकत्र कर के उन्हें फोड़ देते हैं। इन्हीं के देश में सारस अण्डा पारते हैं इसी से सारस के अण्डे और बच्चे दूसरे देशों में नहीं पाये जाते। प्राय: सारस वहां घायल हो कर अस्त्र की पीतल वाली नोक लिये हुए भाग जाते हैं। उसी प्रकार असंभव कथा एनोटोकोइटे † (Enotoko-itai) जङ्गली मनुष्य और अन्य विकटाकार जन्तुओं की है।

---

*टीशियस अपनी इण्डिका नामक पुस्तक में लिखता है कि पिग्मी जाति भारतवर्ष में रहते हैं। भारतवासी स्वयम् उन्हें किराती (Kiratae) जाति के समझते थे। ये एक जंगली जाति थे। जो बन और पर्वतों में रहते थे और आखेट कर के जीते थे। ये इतने छोटे होते थे कि इन का नाम बौना का पर्य्याय वाचक हो गया। लोग समझते थे कि ये गीध और चील्हों से लड़ते हैं। उन के मङ्गोल जाति के होने के कारण भारतवासी उस जाति के स्वरूप की विशेषताओं को अधिक घृणित बना कर वर्णन करते थे। इसी से मेगास्थनीज अमुक्-टीरेस (Amukteres) के विषय में लिखता है कि उन को नाक के बदले केवल दो छिद्र होते थे। ये किराता और प्लिनस का स्काइरिटेस (Scyrites) तथा पेरिप्लस (Periplus-of the Erythrian Sea) का किर्हडाय (Kirrahadai) समान हैं।

† ये संस्कृत में कर्ण प्रावर्णा: कहलाते हैं (जैसे महाभारत २, ११७०, १८७५) इस के अतिरिक्त कर्णिका: लम्बकर्णा:, महाकर्णा:, उष्ट्रकर्णा:, ओष्ठकर्णा:, पाणिकर्णा: जङ्गली

मनुष्य चन्द्रकोइस के निकट नहीं लाये जा सकते थे क्योंकि वे पकड़े जाने पर खाना छोड़ देते थे इस से मर जाते थे। इन को एड़ी आगे होती है और इन का पैर तथा अंगूठा पीछे की ओर फिरा रहता है। * कुछ पकड़ कर लाये

शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। ह्वीलर साहब कहते हैं कि "भारतवर्ष से जो मनुष्य परिचित है वह इन कथाओं की उत्पत्ति का हाल सहज ही में समझ सकता है। चींटियां लोमड़ी के बराबर तो नहीं होतीं किन्तु असाधारण खोदनेवाली होती हैं। वृक्ष उखाड़ कर उन का गदा के ऐसा व्यवहार करना भीम की कथाओं में पाया जाता है। मनुष्यों के कान तो बहुत बड़े नहीं होते पर पुरुष और स्त्री दोनों कानों में गहने पहन कर उन्हें बढ़ाते हैं। स्ट्रेबो यह पढ़ कर अत्यन्त क्रुध हुआ था कि मनुष्यों के कान पैर तक लम्बे होते हैं किन्तु बाबू जौहरी दास का कहना है कि एक बुढ़िया उन से कहती थी कि उस के पति ने, जो एक सिपाही था, एक देश में मनुष्यों को एक कान बिछा कर और दूसरा ओढ़ कर सोते हुए देखा था।" फिच (Fitch) जिस ने सन् १५८५ ई० में भारत का भ्रमण किया था, कहता है कि "भूटान में एक जाति को एक बीता लम्बा कान होता है।" लम्बा कान की कथा सम्भवत: पहाड़ी देशों की है।

* टीशियस और बीटो ने भी इन का वर्णन किया है। ये विचित्र ढंग के पैर होने के कारण ऐन्टीपोडीज (Antipodes) कहलाते थे। इन का नाम पश्चाङ्गुलजा संस्कृत ग्रन्थों में लिखा है।

गये थे जो सोधे थे और जिन्हें मुख नहीं था। ये गङ्गा की जड़ के निकट रहते हैं और उसने हुए मांस की गन्ध तथा फल एवम् फूलों की सुगन्धि से जीवित रहते हैं। मुख के स्थान में इन्हें सूंघने के लिये छिद्र होता है। दुर्गन्ध से इन को कष्ट होता है अतएव वे कठिनता से जीवन धारण करते हैं विशेष कर के शिशिर में। अन्य असम्भव बातों के विषय में दार्शनिकों ने उस से कहा है कि आकुपेडोस * (Okupedes) एक जाति के मनुष्य होते हैं जो दौड़ने में घोड़े से भी आगे निकल जाते हैं। और एनोटोकोटाय जाति के मनुष्यों के कान, पैर तक लम्बे होते हैं जिन में वे सो सकते हैं। वे इतने बलवान् होते हैं कि वृक्षों को उखाड़ डालते हैं और धनुष को ज्या तोड़ देते है। मोनोम्मेटाय (Monommatoi) के कान कुत्ते के समान होते हैं, उन की एक आंख ललाट के बीच में होती है, उन के बाल खड़े होते हैं और छाती बालों से भरा होता है †। अमुक्टीरेस (Amukteres) की नाक के छिद्र नहीं होते, वे सब वस्तु भक्षण करते हैं, कच्चा मांस खाते हैं, अल्पायु होते हैं और वृद्धावस्था के पूर्व मर जाते हैं। इन का ओष्ठ अधर के बहुत नीचे लटकता रहता है। हाइपरबोरियन ‡ (Hyperborean) जो सहस्र वर्ष जीते हैं उन का वर्णन भी

---

* एकपदो का अपभ्रंश है। किराती की एक उपजाति थी जो तीव्रगामी होने के लिये प्रसिद्ध थी।

† संस्कृतग्रन्थों में एकाक्षः, ऊर्ध्वकेशः ललाटाक्षः आदि शब्द प्रयुक्त हुए हैं।

‡ हाइपरबोरियन संस्कृत के उत्तरकुरु देश के समान वर्णित होता है।

वे वैसा ही करते हैं जैसा सिमोनाइडीज़ (Simonides) पिन्डारस (Pindaras) तथा अन्य काल्पनिक कथाओं के लेखकों ने लिखा है। टाइमेजिनीज़ (timagenes) की कथा कि वहां तामा की वर्षा होती है जो बहारा जाता है, कल्पना मात्र है। मेगास्थनीज़ कहता है कि अधिक विश्वासयोग्य निम्न बात है क्योंकि आइबेरिया * (Iberia) में भी यह देखा जाता है। वहां नदियां सोने का चूर्ण बहाती हुई ले जाती हैं और इस का एक अंश राजा को कर स्वरूप में देती हैं।

त्रिंशत पत्रखण्ड।

प्लिनी-इतिहास।

काल्पनिक जातियों के विषय में।

मेगास्थनीज़ के अनुसार नुलो (Nulo) नामक पर्वत पर ऐसे मनुष्य रहते हैं जिन के पैर पीछे को ओर फिरे रहते हैं और जिन्हें आठ अंगुलियां प्रत्येक पैर में होती हैं। और कई पर्वतों पर मनुष्यों की एक जाति रहती है जिन्हें कुत्ता के ऐसा शिर होता है, वे बन्य पशुओं की खाल पहनते हैं। उन की बोली भूकना है। उन्हें चंगुल होता है और वे पशुओं तथा पक्षियों को मार कर खाते हैं। † | टीसियस बताता है कि इन मनुष्यों की संख्या १२०००० से अधिक है और कहता है कि भारतवर्ष में एक जाति होती है जिस की स्त्रियां जीवन

---

* स्पेन नहीं, किन्तु बुलकसी और केस्पियनसी के बीचवाला देश जो आज कल ज्योर्जिया (georgia) कहलाता है।

† संस्कृत में ये शूनमुखा अथवा श्वमुखा कहलाते हैं।

भर में एक ही बार पुत्र उत्पन्न करती हैं और उन की सन्तान जन्मते ही श्वेत केशवाली हो जाती है ।]

× × × × × × × × ×

मेगस्थनीज़ कहता है कि पर्यटन करने वाले भारतवासियों में एक जाति होती है जिन्हें नाक के बदले केवल छिद्र होता है। इन की पैर सांप के ऐसा ऐंठे हुए होते हैं। ये स्काइरिटी (Scyritae) कहलाते हैं। वह एक जाति के विषय में कहता है जो भारतवर्ष के पूर्व की ओर पर गङ्गा के जड़ के निकट रहते हैं। इन का नाम ऐस्टोमी (Astomi) है। इन्हें मुख नहीं होता। इन का शरीर बालों से भरा होता है। ये अपने शरीर को कोमल भूए से ढंकते हैं जो वृक्षों की पत्तियों पर पाया जाता है। ये केवल स्वांस लेकर और नाकों से सुगन्धि सूंघ कर जीते हैं। वे कुछ खाते पीते नहीं हैं। उन्हें कन्द फूल और जंगली सेवों की भांति गन्ध की आवश्यकता होती है। जब वे दूर जाते हैं तब सेवों को अपने साथ लिये जाते हैं जिस में उन्हें सदा कोई पदार्थ सूंघने के लिये मिले। अत्यन्त कड़ी गन्ध से उन की शीघ्र मृत्यु हो जाती है।

एस्टोमी के देश के आगे पर्वत के दूरान्तिक प्रदेशों में ट्रिप्सिथामी (Tripthami) और पिग्मी (Pygmy) रहते हैं। ये दोनों तीन बीता अर्थात् सताइस ऊंचे होते हैं। वहां की आबहवा स्वास्थ्यकर है और वहां सदा बसन्त ऋतु रहती है। उत्तर की ओर ऊंचे २ पर्वत उन की रक्षा करते हैं। यह वही जाति है जिस के विषय में होमर लिखता है कि सारस उन पर चढ़ाई करके उन्हें हैरान करते थे। उन की कथा है कि वे

बकरे और भेड़ों पर चढ़ कर तीर धनुष से सज्जित हो बसन्त ऋतु में सब मिल कर समुद्र के किनारे जाते हैं और इन पक्षियों के अण्डे तथा बच्चों का नाश कर देते हैं। प्रति वर्ष उन्हें यह काम करने में तीन मास लग जाते हैं और यदि वे ऐसा नहीं करें तो आगामी वर्षों में सारस इतने बढ़ जायं कि जिन से अपनी रक्षा करनी कठिन हो जाय। इन की झोंपड़ी मिट्टी, पर और अण्डे के छिलकों की बनती है। [एरिस्टोटल् कहता है कि वे गुफाओं में रहते हैं पर और सब बातें दूसरे लेखकों के ऐसा कहता है]।

[टीसियस से हम लोगों को विदित होता है कि इस जाति की एक उपजाति है जो पेण्डोरो (Pandore) कहलाती है। यह पहाड़ों की तराइयों में बसी है। इस जाति के मनुष्य दो सौ वर्ष जीते हैं। युवावस्था में इन के बाल श्वेत होते हैं किन्तु वृद्ध होने पर ये काले हो जाते हैं। दूसरे चालीस वर्षों से अधिक नहीं जीवित रहते। इन का मैक्रोबि (Macrobii) से घनिष्ठ सम्बन्ध है जिन की स्त्रियां जीवन भर में एक ही बार सन्तान उत्पन्न करती हैं। अगथरचाइडीज़ (Agtharchides) इन सब बातों के अतिरिक्त कहता है कि वे टिड्डी खाकर रहते हैं और तीव्र वेगशाले होते हैं] क्लिटार्कस (Clitarchus) और मेगास्थनीज़ उन्हें मण्डी (Mandi) कहते हैं और उन के ग्रामों की संख्या तीन सौ बताते हैं। स्त्रियां सात वर्ष की अवस्था में बच्चा जनती हैं और चालीस वर्ष में वृद्धा हो जाती हैं।



पञ्चखण्ड विंशत (क)।

सोकिनस।

नुलो (Nulo) पर्वत के निकट ऐसे मनुष्य रहते हैं जिन के पैर पीछे की ओर फिरे रहते हैं। उन की दोनों पैरों में आठ २ अंगुलियां हैं। मेगास्थनीज़ लिखता है कि भारतवर्ष में अन्य पर्वतों पर मनुष्य हैं जिन का सिर कुत्ते के ऐसा है। इन्हें चङ्गुल होता है। ये वल्कल पहनते हैं। ये मनुष्यों की बोली नहीं बोलते केवल भूंकते हैं। इन्हें भोजन पैठा हुआ जबड़ा होता है। [टौसियस की किताब में लिखा है कि किसी स्थान में स्त्रियां एक ही बार सन्तान उत्पन्न करती हैं और बच्चों के केश जन्म ही से श्वेत होते हैं इत्यादि]। ... ...

जिस जाति के मनुष्य गङ्गा की तह के निकट रहते हैं उन्हें भोजन करने की आवश्यकता नहीं होती। वे जङ्गली सेवों की गन्ध सूंघ कर जीते हैं। और जब कभी दूर देश की यात्रा करते हैं तब वे इसे जीवन रक्षा के लिये साथ लिये जाते हैं क्योंकि वे इस की सुगन्धि से प्राण धारण कर सकते हैं। यदि वे अत्यन्त दुर्गन्ध युक्त वायु सांस के साथ खींचें तो मृत्यु अवश्यम्भावी है।

एकत्रिंशत पञ्चखण्ड।

प्लुटार्क।

मुखहीन मनुष्यों की जाति के विषय में।

जब तक चन्द्रमा से जल नहीं प्राप्त हो तब तक भारतवर्ष

का वह (सुगन्ध) कन्द वहां कैसे उपज सकता है जिसे, (मेगास्थनीज कहता है कि) एक जाति के मनुष्य धूप के ऐसा जलाते हैं। ये कुछ खाते पीते नहीं हैं न इन्हें मुख ही है। अतएव (वे इसे जलाते हैं) जिस में इस की सुगन्ध से जीवन धारण कर सकें।

तृतीय खण्ड।

द्वित्रिंशत पत्रखण्ड।

एरियन और प्लिनी।

[एरियन का अनुवाद देखो]

Bigger type

स्ट्रेबो—भारत वासियों की सात जातियों के विषय में।

(३८ मेगास्थेनीज़ के अनुसार भारतवर्ष की जनसंख्या सात भागों में विभक्त है। दार्शनिक श्रेष्ठता में प्रथम है किन्तु संख्या उन की सब से कम है। साधारण रीति से मनुष्य उन्हें बलि अथवा अन्य धर्म सम्बन्धी कर्म कराने के लिये नियुक्त करते हैं और राजा भी सार्वजनिक कार्य के लिये उन्हें वृहत् सभा में बुलाते हैं जिस में वर्ष के प्रारम्भ में सभी दार्शनिक राजा के सम्मुख फाटक पर एकत्र होते हैं। यदि कोई दार्शनिक लाभ दायक उपदेश लिपि बद्ध किये रहता है अथवा अन्न एवम् पशुओं की उन्नति का उपाय निकाले रहता है या सर्वसाधारण के हित की बात सोचे रहता है तो सब के सम्मुख प्रकट करता है। यदि कोई दार्शनिक तीन बार मिथ्या सूचना देते पकड़ा जाता है तो कानून उसे अवशिष्ट जीवन भर चुप रहने का दण्ड देता है। किन्तु जो हितकर उपदेश देता है उस से कर अथवा चन्दा नहीं लिया जाता।

(४०) दूसरी जाति किसानों की है। जनसंख्या के अधिकांश येही हैं। इन का स्वभाव मृदुल और सरल होता है। इन्हें युद्ध नहीं करना पड़ता। ये निर्भीक भाव से अपनी भूमि जोतते हैं। ये नगरों में किसी काम के लिये नहीं जाते न वहां के हलचल में सम्मिलित होते हैं। ऐसा प्रायः होता है कि जिस समय देश के एक प्रान्त में मनुष्य युद्ध के लिये व्यूह बना कर खड़े रहते हैं अथवा अपने प्राणों पर खेल कर लड़ते हैं उसी समय दूसरे मनुष्य निर्भय हल जोतते और भूमि कोड़ते रहते हैं क्योंकि ये योद्धा उन के रक्षक स्वरूप से वहां वर्तमान रहते हैं। समस्त भूमि राजा का धन है और किसान उपज का चतुर्थांश पाने के लिये जोतते हैं।

(४१) तीसरी जाति ग्वाले और व्याधों की है। केवल ये ही आखेट कर सकते हैं और पशुओं को पोस सकते हैं एवम् बोझ ढोने वाले पशुओं को बेचने अथवा भाड़ा पर देने का इन्हीं को अधिकार है। जङ्गली पशुओं तथा हानिकारक पक्षियों से देश को रक्षित कर देने के उपलक्ष में इन्हें राजा के यहां से कुछ अन्न मिलता है क्योंकि ये जन्तु खेत में बोए को खा जाते हैं। ये पर्यटन करते रहते हैं और शिविरों में निवास करते हैं।

यह खण्डित पत्र खण्ड यहां दिया हुआ है।

[यह हुआ जङ्गली जन्तुओं के विषय में अब हम मेगास्थिनीज की बात कहेंगे जहां से हम लोग हट गये थे]

(४२) ग्वाले और व्याधों के बाद, चतुर्थ जाति वणिक दूकानदार और श्रमजीवियों की है। कुछ इन में से कर देते हैं और राज्य के कई निश्चित कामों को करते हैं। किन्तु शस्त्रकार और जहाज बनाने वाले राजा से भोजन और वेतन पाते

है क्योंकि केवल उन्हीं के लिये ये काम करते हैं। सेनापति सैनिकों को अस्त्र देता है और जहाजी सेनापति मनुष्य तथा वाणिज्य के पदार्थों को ढोने के लिये जहाजों को भाड़े पर देता है।

(४७) पांचवीं जाति योद्धाओं की है। जब ये संग्राम नहीं करते तब आलस्य और मद्यपान में ये अपना समय बिताते हैं। राजा के व्यय से ये रखे जाते हैं अतएव जब समय पड़ता है तब ये युद्ध करने के लिये प्रस्तुत रहते हैं क्योंकि अपने शरीर के अतिरिक्त इन्हें अपनी कोई वस्तु नहीं ले जानी पड़ती।

(४८) छठीं जाति निरीक्षकों की है। इन का कर्त्तव्य जो कुछ होता जाता है उसे देखना और राजा से गुप्त रूप से निवेदन करना है। कुछ लोग नगर की देख भाल करते हैं और दूसरे सेना की देखते हैं। ये वेश्याओं को अपना सहायक नियुक्त करते हैं। अत्यन्त विश्वस्त मनुष्य इन पदों पर रखे जाते हैं।

सातवीं जाति मंत्रियों तथा उपदेशकों की है। ये ही राज्य के सर्वोच्च पदों तथा विचारकों के स्थान को भरते हैं और राज्य के साधारण कार्यों को चलाते हैं। * कोई अपनी जाति के

---

* ग्रीस के लेखकों ने जीविका और जाति दोनों को एक से मिला कर बड़ी भूल की है। वे यतियों को ब्राह्मणों से अलग मानते हैं। वैश्यों का उन्हों ने दो विभाग कर दिया है। एक गड़ेरिये और दूसरे किसानों का। गुप्तचरों को इन्हों ने एक स्वतंत्र जाति माना है और शूद्रों के विषय में कुछ लिखा ही नहीं।—एलफिन्स्टोन (Elphinstone)।

बाहर विवाह नहीं कर सकता और न अपनी जीविका की वृत्ति भी बदल सकता। किन्तु दार्शनिकों को उन के सद्गुणों के बदले में यह अधिकार दिया गया है।

चतुःत्रिंशत पत्रखण्ड।

स्ट्रेबो।

राज्य कार्य चलाने के विषय में।

घोड़े और हाथियों के व्यवहार के विषय में।

[पत्रखण्ड ३३ इस के पहले दिया है।]

(५०) राज्य के बड़े २ पदाधिकारियों में से किसी के अधिकार में बाज़ार दिया जाता है दूसरे नगर और अन्य सैनिकों को देखते हैं। कुछ लोग नदियों की निरीक्षा करते हैं, भूमि नापते हैं, जैसा मिश्र (Egypt) देश में किया जाता है, और मोरियों को जांचते हैं जिन के द्वारा बड़ी नहर से उस की शाखाओं और प्रति शाखाओं में जल जाता है जिस में सब को समान जल मिले। इन्हीं मनुष्यों के अधिकार में व्याधे रहते हैं और उन के कर्म के अनुसार पारितोषिक अथवा दण्ड देने का इन्हें स्वत्व रहता है। ये कर लहसीलते हैं और भूमि सम्बन्धी जीविकाओं का निरीक्षण करते हैं जैसे लकड़हारे, बढ़ई, लोहार और खान के श्रम जीवियों की जीविकाओं का। ये सड़क बनाते हैं और प्रति दश स्टेडियम (एक कोस) पर दूरी और उपपथों को दिखाने के लिये एक स्तूप बनाते हैं। जिन के अधिकार में नगर दिया जाता है उन का छः विभाग है। प्रत्येक विभाग में पांच मनुष्य होते हैं। प्रथम विभाग के पदाधिकारी

शिल्प सम्बन्धी सब विषयों को देखते हैं। दूसरे विभाग के मनुष्य विदेशियों का स्वागत करते हैं। इन्हें वे रहने का स्थान देते हैं और जिन मनुष्यों को उन की सेवा में नियुक्त करते हैं उन्हीं के द्वारा इन के रहने की रीति पर दृष्टि रखते हैं। जब ये देश छोड़ने लगते हैं तब वे इन्हें पहुंचा देते हैं और इन की मृत्यु हो जाने पर इन की सम्पत्ति इन के सम्बन्धियों के पास भेज देते हैं। जब ये रुग्न होते हैं तब वे इन की रक्षा करते हैं और मर जाने पर इन्हें गाड़ देते हैं। तीसरे विभाग के कर्मचारी निश्चय करते हैं कि कैसे और कब किसी का जन्म या मृत्यु हुई। ऐसा केवल कर लगाने के लिये नहीं किया जाता किन्तु इस लिये भी कि जिस में राज्य की दृष्टि से बड़े अथवा छोटे का जन्म और मृत्यु गुप्त न रहे। चतुर्थ विभाग वाणिज्य और व्यापार का निरीक्षण करता है। इस विभाग के कर्मचारियों के अधिकार में नापने और जोखने के बटखरे हैं और ये देखते हैं कि प्रत्येक ऋतु का उपज सर्व साधारण को सूचना देकर बेचा जाता है। कोई मनुष्य दो वस्तु का व्यापार नहीं कर सकता जब तक वह दूना कर नहीं देता। पांचवा विभाग वहां के बने हुए वस्तुओं का देख भाल करता है। इन्हें सर्व साधारण को सूचना देकर वे बेचते हैं। नयी वस्तु पुराने से पृथक बिकती है और दोनों को एक में मिलाने से अर्थ दण्ड होता है। छठां या अन्तिम विभाग उन कर्मचारियों का है जो बिके वस्तुओं के मूल्य का दशमांश तहसीलते हैं। इस कर के देने में धोखा देने से मृत्यु दण्ड दिया जाता है।

इन विभागों के येही कर्तव्य हैं जिसे वे अलग २ सम्पन्न करते हैं। और सब मिलकर अपने २ विभागों पर अधिकार रखते हैं एवम् सब साधारण के सुभीते की बातों को भी देखते है जैसे सार्वजनिक गृहों को उत्तम अवस्था में रखना, वस्तुओं के मूल्य का निर्धारण करना, बाज़ार बन्दरगाह और मन्दिरों की रक्षा करना। नगर के अध्यक्षों के बाद एक तीसरी शासक मण्डली है जो युद्ध सम्बन्धी कामों को देखती है। इस के भी छ: विभाग हैं और प्रत्येक में पांच सभ्य होते हैं। एक विभाग जहाजों के सेना पति की सहायता करने के लिये नियुक्त किया जाता है। दूसरा बैल गाड़ियों का निरीक्षण करता है जिन पर युद्ध के यन्त्र, सैनिकों के खाद्य पदार्थ, पशुओं का दाना और अन्य युद्ध की सामग्री भेजा जाता है। ये ढोल और घण्टा बजानेवाले सेवकों को, घोड़ों के साईसों को, एवम् यन्त्रकार तथा उन के सहायकों को नियुक्त करते हैं और उचित स्थान पर भेजते हैं। घण्टा की ध्वनि से वे घसगढ़ों को घास ले आने के लिये भेजते हैं और पारितोषिक तथा दण्ड देकर यह कार्य शीघ्रता तथा नियम के साथ कराते हैं। तृतीय विभाग पदाति सैनिक का देख भाल करते हैं। चतुर्थ विभाग अश्वारोही सेना का, पञ्चम विभाग रथा रोही सेना का एवम् षष्ठ गजारोही सेना का निरीक्षण करते हैं। घोड़े और हाथियों के लिये राजकीय अश्वशालाएं तथा हस्तिशालाएं हैं और अस्त्रशस्त्र रखने के लिये राजकीय शस्त्रागार भी हैं क्योंकि सैनिकों को अस्त्र शस्त्र

शस्त्रागार में तथा घोड़े हाथियों को अश्व एवम् हस्ति शालाओं में लौटा देना पड़ता है। हाथियों को वे लगाम नहीं लगाते। रथों को राह में बैल खींचते हैं और घोड़े केवल बाग पकड़ कर ले जाते हैं जिस में उन के पैर रगड़ खाकर फूल न जांय और उन का साहस रथ खींचने से शान्त न हो जाय। सारथि के अति रिक्त दो रथी रथ पर बैठते हैं। युद्ध के हस्तियों पर चार मनुष्य बैठते हैं, तीन तीर छोड़ने वाले और एक हाथीवान।

पञ्च त्रिंशत पत्रखण्ड।

ईलियन—इतिहास।

अश्व और हस्ति के व्यवहार के विषय में।

[पत्रखण्ड १४। १३-१५]

यह कहा जाता है कि भारतवासी घोड़े के आगे कूद कर उस को गति रोक देते हैं और आगे नहीं बढ़ने देते किन्तु सब भारतवासी ऐसा नहीं कर सकते। केवल वेही कर सकते हैं जिन्हों ने बाल्यकाल से घोड़ा फेरने सीखा है। क्योंकि उन के यहां लगाम से घोड़ा रोकने की और बराबर चाल से सीधे घोड़ा चलाने की प्रथा है। न वे नोकीले जाल से घोड़े की जीभ में कांटा गड़ाते है और न उस के तालु ही को कष्ट देते हैं। घोड़ा सिखाने को जोविका करने वाले चक्कर में बार बार दौड़ा कर घोड़े को सिखाते हैं। विशेषतः घोड़ा जब बदमाश रहता है।

तब वे ऐसा करते हैं। जो इस प्रकार घोड़ा सिखाते हैं उन्हें बलिष्ट भुजा और घोड़ों के पूर्ण ज्ञान की आवश्यकता होती है। घोड़ों से पूर्ण अभिज्ञता रखनेवाले इन की परीक्षा लेने के लिये इन्हें रथ को चक्कर में चलाने के लिये कहते हैं। वास्तव में चार साहसी और वेगवाले घोड़ों को चक्कर में दौड़ने के समय सम्हालना कठिन है। रथ पर दो मनुष्य चढ़ते हैं जो सारथि के समीप बैठते हैं। युद्ध के हस्ति पर, हौदा में या खुली पीठ, तीन योद्धा बैठते हैं। दो बगल से तीर चलाते हैं और तीसरा पीछे की ओर से। उस पर चौथा मनुष्य रहता है जो हाथ में अङ्कुश ले चलता है। जिस प्रकार मांझी या जहाज का कप्तान पतवार से जहाज चलाता है उसी प्रकार यह उसे अङ्कुश से चलाता है।

षष्ठत्रिंशत पत्रखण्ड।

मेंट्टेंबी।

हाथियों के विषय में।

(पत्रखण्ड ३२—६ इस के पूर्व दिया है)।

साधारण मनुष्य घोड़ा या हाथी नहीं रख सकता। ये जन्तु राजा की विशेष सम्पत्ति हैं और इन की रक्षा करने के लिये पुरुष नियुक्त किये जाते हैं। हाथी बझाने की निम्न विधि है। किसी खुले मैदान के चारों ओर एक गढ़ा पांच या छः स्टेडियम् का खोदा जाता है। इस पर एक बहुत पतला पुल बांध दिया जाता है जो मैदान तक पहुंचता है। इस मैदान में तीन या

चार पूर्ण शिक्षित हथिनियां छोड़ी जाती हैं। मनुष्य प्रछन्न झोपड़ों में घात लगाये बैठे रहते हैं। जङ्गली हाथी दिन के समय इस जाल में नहीं आते किन्तु रात्रि के समय एक एक करके इस में प्रवेश करते हैं। जब सब प्रवेश कर जाते हैं तब मनुष्य गुप्त रूप से इसे बन्द कर देते हैं। अनन्तर वह बलिष्ठ पोसुए हाथियों को इस में प्रवेश कराते हैं। ये जङ्गली हाथियों से लड़ते हैं जिन्हें भूखे रख कर भी ये दुर्बल बना देते हैं। जब जङ्गली हाथी सब थकावट के मारे शान्त हो जाते हैं तब अत्यन्त साहसी हाथीवान अपने २ हाथियों के नीचे उतरते हैं और शनैः २ जङ्गली हाथियों के पेट के नीचे चले जाते हैं। अनन्तर वे उन के पैर मिला कर बांधते हैं। तब वे जङ्गली हाथियों को मार कर गिरा देने के लिये पोसुए हाथियों को ललकारते हैं। उन के गिर जाने पर जङ्गली और पोसुए हाथियों की गर्दन एक में बैल के कच्चे चमड़े से बांधते हैं। फिर जिस में जङ्गली हाथी अपने ऊपर चढ़नेवालों को शरीर हिला कर गिरा न दें इस लिये वे मनुष्य इन की गर्दन में चारों ओर से गढ़ा करके चमोटी पहना देते हैं। इस कष्ट से वे शान्त रहते हैं। इन हाथियों में जो बहुत बूढ़े या बहुत बच्चे रहते हैं उन को छोड़ कर अवशिष्ट को वे हस्तिशालाओं में ले जाते हैं। यहां वे उन के पैर एक दूसरे के पैर में और उन की गर्दन एक दृढ़ खम्भे में बांधते हैं। यहां भी उन्हें भूखे रख कर पोसुआ बनाते हैं। इस के उपरान्त उन्हें हरी हरी दूब और हरे पौधे खिला कर वे पुनः बलिष्ठ करते हैं। तब वे उन्हें चुचकार कर तथा मधुर शब्द संगीत एवम् वाद्य से आज्ञाकारी होना सिखाते हैं।

बहुत कम उन में से पोस नहीं मानते क्योंकि वे स्वयम् इतने मधुर और सीधे स्वभाव के होते हैं कि बुद्धिमान जीवों

को ममता करते हैं। उन में से कितने युद्ध में गिरे हाथीवानों को रणक्षेत्र से उठा कर कुशलपूर्वक बाहर ले जाते हैं। और कितने जब उन के अधीश्वर उन के चरणों के बीच में शरण लेते हैं तब उन्हें बचाने के लिये लड़ते हैं और उन की प्राणरक्षा करते हैं। यदि क्रोधवश हो कर वे अपने शिक्षक या अन्नदाता को मार देते हैं तो उस के लिये वे इतना शोच करते हैं कि भोजन करना छोड़ देते हैं और कभी २ भूखे प्राण भी त्याग देते हैं।

वे घोड़ों के समान हथिनियों से सङ्गम करते हैं जो बसन्त ऋतु में गर्भ धारण करती हैं। इस समय हाथी मस्त हो जाते हैं। गण्डस्थल के निकट इन को एक छिद्र होता है जिस में से चर्बी के समान कोई पदार्थ निकलता है। इसी अवसर पर हथिनियों के गर्भाधान की राह खुल जाती है। ये सोलह मास से ले कर अठारह मास तक बच्चों को पेट में रखती हैं। बच्चों को छः वर्ष तक ये दूध पिलाती हैं। बहुत से हाथी अति वृद्ध मनुष्यों की अवस्था तक जीवित रहते हैं और कुछ दो सौ वर्षों से भी अधिक जीते हैं। इन्हें कई रोग होते हैं और शीघ्र नीरोग नहीं होते। आंख के रोग की औषधि गाय का दूध लगाना है। बहुत से अन्य रोगों में उन्हें काला मद्य दिया जाता है। उन के घावों को अच्छा करने के लिये उन्हें मक्खन खिलाया जाता है क्योंकि यह लोहे को बाहर फेंक देता है। शूकर के मांस से उन के घाव सेंके जाते हैं।

सप्तत्रिंशत पत्रखण्ड ।

एरियन—इण्डिका अध्याय १३—१४ ।

[एरियन का अनुवाद देखो] ।

पत्रखण्ड सप्तत्रिंशत (क) ।

ईलियन-इतिहास ।

हाथियों के विषय में ।

(पत्रखण्ड ३६—८—१० और ३७—८—१०)

भारतवर्ष में पूर्णयुवा हाथी पकड़ा जाय तो उसे पोसना कठिन है क्योंकि स्वाधीनता के लिये वह रक्त का प्यासा बना रहता है। यदि वह सांकड़ में बांधा जाय तो वह और भी क्रुद्ध होता है और किसी को स्वामी नहीं मानता, किन्तु भारतवासी भोजन देकर उसे फुसलाते हैं और जिन २ पदार्थों की उसे रुचि होती है उन सभों को देकर उसे शान्त करते हैं। उन का उद्देश्य उस का पेट भरना और उस के क्रोध को ठण्ढा करना रहता है। तथापि यह उन से क्रुद्ध रहता है और उन की एक नहीं सुनता। तब वे क्या करते हैं? वे देशी धुन में गाते हैं और एक साधारण बाजे के स्वर से इसे शान्त करते हैं। इस बाजे में चार डोरी रहती है और यह स्किन्डे-प्सस् (Skindapsos) कहलाता है। तब यह जन्तु अपने कानों को खड़ा कर के मधुर ध्वनि सुनता है जिस से इस का क्रोध ठण्ढा पड़ता है। इस के उपरान्त यद्यपि कभी कभी उस की दबी हुई क्रोधाग्नि भड़क उठती है, तथापि वह क्रमश: खाने पीने लगता है। अनन्तर यह बन्धन से मुक्त किया जाता

है किन्तु भागता नहीं क्योंकि सङ्गीत से यह वशीभूत किया रहता है। यह भोजन उत्कण्ठा के साथ करता है और विलास प्रिय अतिथि के ऐसा भोजनागार में सङ्गीत के माधुर्य्य को छोड़ कर जाने की इच्छा नहीं करता।

अष्टत्रिंशत पत्रखण्ड।

ईलियन—इतिहास १३—७।

हाथियों के रोगों के विषय में।

[पत्रखण्ड ३६—१५ और ३७—१५।]

भारतवासी बझाये हुए हाथियों के घावों को निम्नरीति से आरोग्य करते हैं। वे उसी प्रकार इन के साथ व्यवहार करते हैं जैसा होमर ने लिखा है कि पेट्रोक्लस (Patroklos) ने यूरिपाइलस (Eurypylos) के साथ किया था। वे सुसुम (ईषदुष्ण) जल से उन के घावों को संकते हैं। इस के बाद वे उस पर मक्खन लगाते हैं। यदि घाव गहरे होते हैं तो वे गरम और रुधिर से भरे शूकर के मांस के टुकड़ों को उस में भर कर सूजन को कम करते हैं। गाय के दूध से वे आंख का फूलना अच्छा करते हैं। पहले इस से आंख को संकते हैं तदनन्तर इसे आंख में लगाते हैं। जब ये जन्तु आंखें खोलते हैं तब इन्हें इस बात की बड़ी प्रसन्नता होती है कि ये पहले से अधिक देखते हैं और वे अपना लाभ मनुष्यों की भांति समझते हैं। जैसे २ इन का अन्धापन घटता है वैसे २ इन की प्रसन्नता बढ़ती है। यही पहचान इन के आरोग्य होने का है। अन्य रोगों की औषधि काला मद्य है और यदि इस से वे नीरोग नहीं हुए तो और कुछ उन्हें बचा नहीं सकता।

एकोनचत्वारिंशत पत्रखण्ड ।

स्ट्रेबो ।

सोना खोद कर निकालने वाली चींटियों के विषय में ।*

मेगास्थनीज ने इन चींटियों का वृत्तान्त निम्नरूप से दिया है । भारतवर्ष में डरडाय †(Derdai) नामक एक बड़ी जाति है जो पूर्व सीमा के पर्वतों पर रहती है । यहां एक उच्च मैदान ‡ है जो गोलाई में तीन सहस्र स्टेडियम् है । इस भूमि के नीचे सोने की खानें हैं और यहीं पर वे चींटियां होती हैं जो उस धातु के लिये भूमि खोदती हैं । ये जंगली लोमड़ियों से छोटी नहीं होतीं । वे आश्चर्यजनक वेग से दौड़ती हैं और आखेट कर के जीवन धारण करती हैं । वे जाड़े के दिनों में भूमि कोड़ती हैं । § छछुन्दर के ऐसा ये खानों के मुंह पर मिट्टी की ढेरी लगा देते हैं । सोनायुक्त मिट्टी को थोड़ा उबालना पड़ता है । पड़ोस के मनुष्य बोझा ढोनेवाले पशुओं के साथ प्रच्छन्न रूप से आकर इसे उठा ले जाते हैं । यदि खुली रीति से आवें तो

---

* इण्डियन एण्टिक्वेरी (Indian Antiquary) ने इस बात का प्रमाण दिया है कि सोना खोद कर निकालनेवाली चींटियां तिब्बत के खान में काम करनेवाले हैं ।

† प्लिनी डारडी (Dardae) और टौलेमी डारड्राय (Dardrai) कहता है कि संस्कृत में दरदा: (Dardas) इन का नाम है । ये अब तक पाये जाते हैं ।

‡ चोजोटोल (chojotol) के मैदान ।

§ ठोक जालंग (Thok jalung) के खानवाले जाड़े के दिनों में खोदना पसन्द करते हैं क्योंकि बरफ से जम जाने के कारण भीतर खान गिरने का डर नहीं रहता ।

चींटियां उन से युद्ध करती हैं और भागने से उन का पीछा करती हैं। इस प्रकार उन को और उन के पशुओं को मार डालती हैं। इस से बिना दिखाई दिये चोरी करने के लिये वे वन्यपशुओं का मांस भिन्न स्थानों में रख देते हैं और इस प्रकार जब चींटियां छितर बितर हो जाती हैं तब वे स्वर्णमिश्रित मिट्टी उठा ले जाते हैं। जो सौदागर मिलता है उसी के हाथ ये इसे कच्चा ही बेच देते हैं क्योंकि उन को धातु गलाना नहीं आता।

चत्वारिंशत पत्रखण्ड।

एरियन इण्डिका १५-५-७।

(एरियन का अनुवाद देखो)।

पत्रखण्ड चत्वारिंशत (क)

डायो क्राइसेस्ट ३५ पृष्ठ ४३६, मोरेल।

उन चींटियों के विषय में जो सोना खोदती हैं।

(पत्रखण्ड ३४ और ४०)।

उन्हें चींटियों से सोना मिलता है। ये जन्तु लोमड़ियों से बड़े होते हैं किन्तु अन्य विषयों में इसी देश की चींटियों के समान हैं। ये दूसरी चींटियों के समान भूमि में बिल बनाती हैं। मिट्टी को जो ढेर वे लगाती हैं उस में अत्यन्त चमकीला और सच्चा सोना रहता है। ये सब ढेरों निकट ही पंक्तियों में वे लगाती हैं जो सोने के टीले प्रतीत होते हैं और जिन से सारा मैदान चमक उठता है। इस लिये सूर्य्य की ओर देखना कठिन हो जाता है और बहुत से मनुष्यों ने ऐसा करके अपनी आंखों की ज्योति खो दी है। जो मनुष्य पड़ोस में रहते हैं वे सोना को लूटने के लिये तीव्र वेगवाले घोड़ों से जुते गाड़ियों पर चढ़ कर

बीच के रेगिस्तान को पार करके आते हैं। यह बालुकाभूमि बहुत बड़ी नहीं है वे दो पहर को पहुंचते हैं जिस समय चींटियां भूमि के नीचे रहती हैं। वे शीघ्र अभीष्ट वस्तु को ले कर पूर्ण वेग से भागते हैं। चींटियां यह बात जान करके उन का पीछा करती हैं और उन्हें पकड़ लेने पड़ उन से युद्ध करती हैं जब तक विजय अथवा मरण न हो; क्योंकि सब जन्तुओं में ये अधिक साहसी होती हैं। इस से ज्ञात होता है कि वे सुवर्ण का मूल्य समझती हैं और वे इस के लिये जीवन भी विसर्जन कर देती हैं।

एकचत्वारिंशत पत्रखण्ड।

मेड्रिंबो-१५-१-५८-६० -पृष्ठ ७११-१४।

भारतवर्षीय दार्शनिकों के विषय में।

(पत्रखण्ड २८ इस के पहले दिया है)।

(५८) दार्शनिकों के विषय में मेगास्थनीज कहता है कि जो दार्शनिक पर्वतों पर रहते हैं वे डायोनाइसस के पूजक हैं। जङ्गली अंगूर जो उसी देश में होता है, इश्कपेंचा, मेंहदी, देवदार और अन्य सदा हरित रहनेवाले वृक्ष जो एकआध उद्यानों के अतिरिक्त यूफ्रेटीज़ (Euphrates) के बाद कहीं नहीं पाये जाते, ये सब इस बात को प्रमाणित करते हैं कि वह इसी देश में हुआ था। उन की कुछ रीतियां बैकेनल (Bacchanals) की रीतियों के समान हैं। जैसे वे मलमल पहनते हैं, पगड़ी बांधते हैं, सुगन्धि लगाते हैं, चमकीले रङ्गों में कपड़े रंगा कर धारण करते हैं, और उन के राजा जब सर्वसाधारण में निकलते हैं तब उन के पीछे ढोल और घण्टा बजता चलता है। किन्तु जो दार्शनिक मैदानों में रहते हैं वे

हेरेक्लीज़ को पूजा करते हैं। [ये वृत्तान्त काल्पनिक हैं और कई लेखक इस का विरोध करते हैं, विशेष कर के उस भाग का जिस में अङ्गूर और मद्य के विषय में लिखा है, क्योंकि अर्मेनिया (Armenia) का अधिकांश और सम्पूर्ण मेसोपोटेमिया (Mesopotamia) तथा मेडिया (Media) पर्शिया (Persia) और कर्मेनिया (Karmania) तक ये सब यूफ्रेटीज़ के बाद हैं, किन्तु इन सब स्थानों के अधिक भाग में उत्तम अङ्गूर होता है और अच्छा मद्य बनाया जाता है।]

(५८) मेगास्थनीज़ दार्शनिकों का भिन्न रीति से विभाग करता है। वह कहता है कि दार्शनिक दो प्रकार के होते हैं। एक को वह ब्राचमेनस (Brachmanes) कहता है और दूसरों को सर्मनेस * (Sarmanes)। ब्राचमेनस सब से अधिक प्रतिष्ठित हैं, क्योंकि उन के विचार अधिक युक्तिसङ्गत होते हैं। गर्भ में आने के समय से वे विद्वान् मनुष्यों की सुरक्षकत्व में रहते हैं। ये उन की माता के पास मंत्रों द्वारा उस को तथा उस के गर्भस्थित शिशु की भलाई करने के बहाने जाते हैं और वास्तव में उत्तम उपदेश देते हैं। जो स्त्रियां ध्यानपूर्वक इसे सुनती हैं वे सन्तान के विषय में अत्यन्त भाग्यशाली समझी जाती हैं। जन्म के बाद शिशु, एक के बाद दूसरे मनुष्य की रक्षकत्व में रहता है और जैसे २ वह बढ़ता है वैसे वैसे उस के शिक्षक अधिक योग्य

* प्रमाणों से इन के बोध होने की सम्भावना अधिक होती है।

नियत किये जाते हैं। दार्शनिकों का गृह नगर के सामने एक कुञ्ज में सामान्य हाते के भीतर होता है। वे बड़े सरल रीति से रहते हैं और कुश या चर्म के आसन पर सोते हैं। वे मांस भक्षण नहीं करते और सम्भोग सुख से अपने को वञ्चित रखते हैं। वे गूढ़ विषयों पर कथनोपकथन करने में और श्रोताओं को ज्ञान प्रदान करने में अपना समय व्यतीत करते हैं। श्रोता बोलने या खांसने नहीं पाता, थूक कहां तक फेंक सकता है। और यदि वह ऐसा करता है तो उसी दिन संयमी नहीं होने के कारण जाति के बाहर कर दिया जाता है। इस प्रकार सैंतीस वर्षों तक रह कर प्रत्येक मनुष्य अपने घर चला आता है, जहां वह सुख और शान्ति के साथ अवशिष्ट जीवन व्यतीत करता है *। तब वे उत्तम मलमल धारण करते हैं। सोने की अंगूठी तथा बाली अङ्गुली और कानों में पहनते हैं। वे मांस खाते हैं, किन्तु काम करनेवाले जन्तुओं के नहीं। वे गरम तथा अत्यन्त पक्व पदार्थ भोजन नहीं करते। वे जितनी इच्छा होती है उतने विवाह करते हैं जिस में उन्हें पुत्र अधिक हों। और बहुत स्त्रियों के होने से मनुष्यों को लाभ अधिक होता है। उन के यहां दास (गुलाम) नहीं होते, अतएव उन्हें आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिये अधिक सन्तति का प्रयोजन होता है।

---

* ग्रीस के लेखक वर्ण और आश्रम में भूल करते हैं। इसी से वे लिखते हैं कि मनुष्य जो पहले उपदेशक थे पीछे गृहस्थ हो गये। सम्भवतः वे ब्रह्मचर्याश्रम के विषय में लिखते हैं।

उत्तम स्त्रियों को दर्शन नहीं सिखाते, इस डर से कि कहीं उस के गुप्त तत्वों के वे पतितों को न बता दें अथवा दर्शन में पूर्णता प्राप्त करके उन्हें छोड़ न दें। क्योंकि जो मनुष्य सुख दुःख की अपेक्षा नहीं करता और जीवन मृत्यु को तुच्छ समझता है वह दूसरे के आधिपत्य में रहना नहीं चाहता। किन्तु उत्तम पुरुष और स्त्री दोनों का यही प्रधान गुण है।

वे मृत्यु के विषय में बहुधा कथनोपकथन करते हैं। दर्शन के अनुयायियों के लिये इस जीवन को वे गर्भाशय में जीने के तुल्य मानते हैं और मरण को सत्य तथा आनन्दमय लोक में जन्म के समान समझते हैं। इसी कारण मृत्यु का सामना करने के लिये वे अनेक प्रकार का अभ्यास करते हैं। वे समझते हैं कि मनुष्यों पर जो बीतता है वह बुरा या भला कुछ नहीं होता। ऐसा समझना स्वप्न के समान केवल माया का भ्रम है, नहीं तो कैसे एक ही वस्तु से एक को दुःख और दूसरे को सुख होता और एक ही वस्तु एक ही मनुष्य में इन विपरीत भावों को उत्पन्न करती?

वही लेखक कहता है कि प्राकृतिक घटनाओं के विषय में उन के विचार बड़े बेढङ्ग हैं। वे कार्य करने में जितना दक्ष हैं विचार करने में उतना नहीं हैं, क्योंकि उन का विश्वास अधिक कल्पित कथाओं पर निर्भर है। तथापि कई बातों में उन लोगों के विचार ग्रीक लोगों से मिल जाता है। इन्हीं लोगों के ऐसा वे कहते हैं कि संसार का आदि था और इस का अन्त होगा। इस का स्वरूप गोला है और जिस देवता ने इसे बनाया है तथा इस का शासन करता है वह इस के प्रत्येक अंश में व्याप्त है। वे मानते हैं कि ब्रह्माण्ड में अनेक तत्व अपना फल दिखाते हैं और कहते हैं कि जल-तत्व से पृथ्वी बनी। चार तत्वों के अतिरिक्त

एक पांचवां कारण है, जिस से आकाश और नक्षत्र उत्पन्न हुए। यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड के बीच में स्थित है। उत्पत्ति और आत्मा के गुण तथा अनेक अन्य विषयों पर वे ग्रीक लोगों के समान विचार प्रकट करते हैं। वे अमरत्व, भावी न्याय और इसी प्रकार के अन्य सिद्धान्तों को प्लेटो (Plato) की नाईं आलङ्कारिक कथाओं द्वारा कहते हैं; यही उस का वृत्त है ब्राचमन लोगों के विषय में।

(६०) समनस * के विषय में वह कहता है कि इन में जो सब से अधिक प्रतिष्ठित हैं वे हाइलोबिओइ (Hylobioi) कहलाते हैं। ये जङ्गलों में रहते हैं, जहां ये वृक्षों की पत्तियां तथा जङ्गली फल खाते हैं और वृक्षों की छाल पहनते हैं। ये स्त्री प्रसङ्ग नहीं करते और मद्य नहीं पीते। ये राजाओं से पत्रव्यवहार करते हैं, जो दूतों द्वारा किसी बात का इन से कारण पूछते हैं। राजा लोग इन्हीं लोगों के द्वारा देवता की पूजा और प्रार्थना करते हैं। हाइलोबिओइ के बाद चिकित्सक प्रतिष्ठित होते हैं; क्योंकि वे मनुष्य की प्रकृति की शिक्षा ग्रहण करते हैं पर वे मैदानों में नहीं रहते। इन का खाद्य पदार्थ चावल और यव के बनाये हुए पदार्थ हैं। यह सर्वदा एक बार मांगने ही से उन्हें मिल सकता है या जो उन्हें अतिथि बनाते हैं उन्हीं से प्राप्त हो सकता है। औषधियों के ज्ञान से ये अनेक सन्तान उत्पन्न करा सकते हैं और पुत्र होगा या पुत्री होगी इस का निर्णय कर सकते हैं। ये भोजन का संयम करा के अधिक आरोग्य करते हैं, औषधि के प्रयोग से कम। मरहम और पट्टी

---

* बौद्ध भिक्षुक श्रमण कहलाते थे।

लोग अधिक पसन्द करते हैं। अन्य औषधियों को वे समझते हैं कि उन की प्रकृति के विरुद्ध हैं। यह जाति और पहली जाति भी परिश्रम करके और कष्ट सह कर धैर्य का अनुशीलन करती हैं, यहां तक कि इन जातियों के मनुष्य दिन दिन भर एक आसन निश्चल रह जाते हैं। *

इन के अतिरिक्त भविष्यद्वक्ता, जादूगर और मृत मनुष्यों के सम्बन्धी रीति और व्यवहारों के जाननेवाले होते थे ये ग्रामों और नगरों में भिक्षा मांगते फिरते हैं।

उन में से अधिक शिक्षित और उत्तम बुद्धि वाले मनुष्य भी नरक के विषय में ऐसा मिथ्या विश्वास रखते हैं जिस से उन के धर्म और धर्म में सहायता मिलती है। उन में कुछ लोगों के साथ स्त्रियां दर्शन का मनन करती हैं, किन्तु मैथुन नहीं करतीं।

द्विचत्वारिंशत पत्रखण्ड।

क्लीम० अलेक्ज़० पृष्ठ ३०५।

अनेक प्रमाणों से फाइलो पिथेगोरियन (Philo Pythagorian) दिखलाता है कि यहूदी जाति इन जातियों में सब से प्राचीन है और उन का दर्शन जो लिपिबद्ध हुआ है, ग्रीस के दर्शन के पूर्व से है। यह बात एरिस्टोबूलस पेरिपेटेटिक (Arisloboulos Peripatetic) तथा बहुत से अन्य लेखकों ने

---

* आश्चर्य का विषय है कि ग्रीकलेखकों ने बौद्धों के विषय में नहीं लिखा है, यद्यपि सिकन्दर के आने के दो शताब्दि पूर्व से यह मत प्रचलित था। सम्भवत: बौद्धों के रूप में कोई विशेषता नहीं होने के कारण ये उन्हें पहचान नहीं सके।

भी लिखी है, जिन का वर्णन करना समय नष्ट करना होगा। भारतवर्ष के ऊपर एक ग्रन्थ का प्रणेता मेगास्थनीज़ जो सेल्युकस नाइकेटर (Selukos Nikator) के साथ रहता था, इस विषय पर स्पष्ट रीति से लिखता है—उस के शब्द निम्न हैं—"जो कुछ प्रकृति के विषय में प्राचीन समय के मनुष्यों ने कहा है उसे ग्रीस के बाहर के भी दार्शनिक कहते हैं। भारतवर्ष में ब्राचमेनस और सारिया के निवासी यहूदी इसे मानते हैं।"

पत्रखण्ड द्विचत्वारिंशत (क)।

यूसेब० प्रेप० ८।६ पृष्ठ ४१०।

क्लीमेन्स अलेक्स०।

इस के अतिरिक्त फिर वह आगे लिखता है—"मेगास्थनीज़ नामक लेखक जो सेल्युकस नाइकेटर के साथ रहता था, इस विषय पर स्पष्ट रीति से लिखता है—जो कुछ प्रकृति के विषय में प्राचीन समय के मनुष्यों ने कहा है," इत्यादि।

पत्रखण्ड द्विचत्वारिंशत (ख)।

साइरिल—कौन्ट्रा जूलियन ४।

क्लीमेन्स अलेक्स०। *

एरिस्टोब्युलस पेरिपेटेटिक कहीं निम्न भांति से लिखता है। "जो कुछ प्रकृति०" इत्यादि।

---

* साइरिल भूल से मेगास्थनीज़ के बदले एरिस्टोब्युलस पेरिपेटेटिक लिखता है।

त्रिचत्वारिंशत पत्रखण्ड।

क्लीमेन्स अलेक्स० स्ट्रोम० १ पृष्ठ ३०५।

भारतवर्ष के दार्शनिकों के विषय में।

[दर्शन मनुष्यों को सुखप्रद लाभ पहुंचाते हुए, बहुत काल पूर्व विदेशियों में प्रचलित था। अपनी ज्योति जेन्टाइल (Gentile) लोगों में छिटकाते हुए यह अन्त में ग्रीस में पहुंचा। इस को बतानेवाले मिश्र देशवासियों में उन के पैगम्बर, ऐसीरियन लोगों में चेल्डियन (Chaldaean) गाल (Gaul) लोगों में ड्रूइड (Druids), बैक्ट्रियन (Bactrians) और केल्ट (Kelts) में सर्मनीयन (Sarmanaeans) जो दार्शनिक थे, फारस देश के निवासियों में मागी (Magi), भारतवासियों में जिम्नोसोफिस्ट (Gymnosophist) और अन्य विदेशी जातियों में उन के दार्शनिक थे। तुम जानते हो कि मागी ने जीसस के जन्म के विषय में पहले ही कह दिया था और एक नक्षत्र का पीछा करते २ ये जूडिया (Judaea) देश में पहुंचे।]

भारतवर्षीय दार्शनिकों की दो जातियां हैं—एक सर्मनाय और दूसरी ब्राचमेनाय। सर्मनाय से सम्बन्ध रखनेवाले हाइलोबिओइ (Hylobioi) दार्शनिक हैं, जो न नगरों में रहते हैं और न गृहों में। ये वृक्षों की छाल पहनते हैं। ये बन्दूत का बीज खा कर रहते हैं और हाथों से जल पीते हैं। ये न विवाह करते हैं न इन्हें सन्तान होती है। [हमारे समय के उन तपस्वियों के ऐसा जो एनक्रैटीटाय (Enkratetai) कहलाते हैं। भारतवासियों में ऐसे दार्शनिक

हैं जो बुट्टा (Boutta) * के अनुयायी हैं, जिस का वे असाधारण पवित्रता के कारण देवता के तुल्य आदर करते हैं।]

चतुर्चत्वारिंशत पत्रखण्ड।

सट्रेबो १५-१-६८—पृष्ठ ७१८।

कलेनस और मण्डेनिस के विषय में।

मेगास्थनीज़ कहता है कि आत्मघात करना दार्शनिकों का सिद्धान्त नहीं है; किन्तु जो ऐसा करते हैं वे निरे मूर्ख समझे जाते हैं। स्वभावत: कठोर हृदयवाले अपने शरीर में छुरा भोंकते हैं, अथवा ऊंचे स्थानों से गिर कर प्राण देते हैं, कष्ट की उपेक्षा करनेवाले डूब मरते हैं, कष्ट सहने में सक्षम फांसी लगाते हैं और उत्साह पूर्णमनुष्य आग में कूदते हैं। कलेनस † (Kalanos) भी इसी प्रकृति का मनुष्य था। वह अपने कुवृत्तियों के वश में था और सिकन्दर का दास हो गया। इसीलिये वह निन्दास्पद समझा जाता है। किन्तु मण्डेनिस की प्रसंसा की जाती है, क्योंकि जब सिकन्दर के दूतों ने ज्युस (Zeus) के पुत्र के निकट जाने के लिये उसे निमंत्रण दिया तब वह नहीं गया, यद्यपि दूतों ने जाने पर पारितोषिक देने की और नहीं जाने पर दण्ड देने की प्रतिज्ञा की थी। उस ने कहा कि सिकन्दर ज्युस का पुत्र नहीं है, क्योंकि वह आधी पृथ्वी का भी अधिपति

---

* इस वाक्य का दूसरा अर्थ यह होगा— ये (हाइलोबिओइ) भारतवर्ष के मनुष्यों में वे लोग थे जो बुद्ध का मत मानते थे।

† कलेनस तक्षिसला से सिकन्दर की सेना के साथ हुआ और जब वह रुग्ण हुआ तब सम्पूर्ण सेना के सम्मुख बिना कष्ट क्लेश के चिता पर अपने को जला दिया।

नहीं है। अपने लिये उस ने कहा कि मैं ऐसे मनुष्य का दान नहीं लेना चाहता, जिस की इच्छा किसी वस्तु से पूर्ण नहीं होती और उस की धमकी का मुझे डर नहीं है, क्योंकि यदि मैं जीवित रहा तो भारतवर्ष मेरे भोजन के लिये बहुत देगा और यदि मैं मर गया तो वृद्धावस्था से क्लिष्ट इस अस्थि चर्म के शरीर से मुक्त हो कर मैं उत्तम और अधिक पवित्र जीवन प्राप्त करूंगा। सिकन्दर ने आश्चर्यान्वित होकर उस की प्रशंसा की और उस की इच्छानुसार उसे छोड़ दिया।

पञ्चचत्वारिंशत पत्रखण्ड।

एरियन ७·२·३·९·

(एरियन की इण्डिका का अनुवाद देखो।)

चतुर्थ खण्ड।

षट्चत्वारिंशत पत्रखण्ड।

स्ट्रैबो १५·१·६·८ पृष्ठ ६८६—६८८।

भारतवासियों पर अन्य विदेशियों ने कभी चढ़ाई नहीं की और न ये लोग दूसरे देश पर चढ़ कर गये।

(६) किन्तु काइरस (Kyros) और सेमिरेमिस * (Semiramis) की चढ़ाई के [illegible] भारतवर्ष का [illegible] है उस

---

* सेमिरेमिस की चढ़ाई के विषय में डायोडोरस सिकुलस ने लिखा है, किन्तु उस का वर्णन काल्पनिक कथा के समान है और उस में भौगोलिक वृत्तान्त ठीक नहीं दिया है, जिस से घटनायें असत्य प्रतीत होती हैं। यह चढ़ाई यदि हुई थी तो

पर कितना विश्वास किया जा सकता है? मेगास्थनीज़ भी इस विषय में सम्मत है और अपने पाठकों को भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास का अविश्वास करने को उपदेश देता है। वह कहता है कि यहां के निवासियों ने कभी देश के बाहर चढ़ाई नहीं की और न उन के देश पर, हेरैक्लीज़ और डायोनीसस के अतिरिक्त कोई दूसरा चढ़ कर आया या विजय प्राप्त किया। हां, आधुनिक समय में मैकिडोनियन चढ़ कर आये थे। तथापि सेसोस्ट्रिस * मिश्र देश का और टियर्कन (Tearkon) एथियोपिया का यूरोप तक बढ़ कर गये थे। जितना हेरैक्लीज़ ग्रीक लोगों में विख्यात है उस से भी अधिक नबुकोद्रोसर (Nabukodrosar) चेल्डियन लोगों में प्रसिद्ध है। यह उन स्तूपों † तक अपनी सेना ले गया था जहां टियर्कन भी पहुंचा। और सेसोस्ट्रिस आइबीरिया से थ्रेस (Thrace) और पोन्टस

आठवीं शताब्दि ईसामसीह के पूर्व हुई थी। ई० सन् के पूर्व छठीं शताब्दि में काइरस सिन्धु नदी तक गया था। जब वह लौटा तब उस की सारी सेना जिड्रोसिया में नष्ट हो गयी। वह फारस का विख्यात राजा था। इस में कोई सन्देह नहीं कि इन का विजय क्षणिक था।

* सम्भवत: यह मनेथो (Manetho) के उन्नीसवें राज्यवंश का तीसरा राजा रैमसेस (Ramses) था। इस के पिता का नाम सेटी (Seti) और पुत्र का मेनिफ्थाह (Meniphthah) था जो एग्ज़ोडस (Exodus) का फाराओ (Pharaoh) था।

† टालमी इन स्तूपों को "सिकन्दर का स्तूप" कहता है। अल्बेनिया और आइबेरिया के ऊपर एशियाटिक सरमैटा के किनारे।

(Pontus) में भी घुस गया। इस के अतिरिक्त आइडैनथर्सस (Idanthyrsos) स्कीदिया का मिश्र देश तक एशिया का विजय किया। किन्तु इन में से एक भी भारतवर्ष के निकट नहीं गये और सेमिरेमिस, जिसे इस पर चढ़ाई करने की इच्छा थी, आवश्यक प्रयत्न करने के पूर्व ही मर गयी। फारसदेश-वासियों ने भारतवर्ष से हाइड्रेकाय (Hydrakai) * को वेतन लेकर युद्ध करने के लिये बुलाया था, किन्तु वे उस देश में कोई सेना लेकर नहीं गये और जब काइरस मैसेगेटाय (Massegetai) के विरुद्ध जा चुका तब वे उस देश के निकट पहुंचे।

डायोनिसस और हेरैक्लीज़ के विषय में।

हेरैक्लीज़ और डायोनिसस विषयकवृत्तान्त मेगास्थनीज़ और कुछ थोड़े अन्य लेखक विश्वासयोग्य मानते हैं। [किन्तु एरैटोस्थनीज़ और अधिकांश लेखकों में से इसे काल्पनिक तथा विश्वास के अयोग्य समझते हैं, जिस प्रकार यौस की प्रचलित कथाएं असत्य हैं ...]।

(८) इन्हीं कारणों से वे एक विशेष जाति को नाइसायन (Nyssaian) और उन के नगर को नाइसा (Nyssa) कहते हैं। इस नगर को डायोनिसस ने बसाया था। नगर के ऊपर जो पर्वत खड़ा है उसे वे मीरन (Meron) कहते हैं। इन का इस प्रकार नामकरण करने के कारण वे बताते हैं कि वहां इशक्पेचा उत्पन्न होता है और अङ्गूर भी फलता है, यद्यपि इस के फल पूर्णता को नहीं प्राप्त होते, क्योंकि अधिक वर्षा होने से गुच्छे

---

*इन्हें ओक्सिड्रेकाइ (Oxydrakai) भी कहते हैं। लैसेन के अनुसार संस्कृत में ये क्षुद्रक होंगे।

पक होने के पूर्व ही गिर पड़ते हैं। वे ओक्सड्रेकाइ को डायोनिसस का वंशज कहते हैं, क्योंकि उन के देश में अङ्गूर होता है और वे बड़े धूमधाम के साथ जलूस निकालते हैं। उन के राजा भी रण में जाने के समय अथवा अन्य अवसरों पर बैकस (Bachus) के ढङ्ग से निकलते हैं। उस समय ढोल बजते रहते हैं और भड़कीले [illegible] रहते हैं। इस प्रकार के वस्त्र धारण करने की [illegible] के अन्य जातियों में भी है। फिर जब [illegible] मण में आर्योनस (Aornus) पर्वत को, जिस का [illegible] नदी से धोत होता है, ले लिया, तब उस के अनुयायी, उस का गौरव बढ़ाने के लिये यह कहने लगे कि हैरेक्लीज़ ने [illegible] उस पर्वत पर आक्रमण किया था, किन्तु किसी बार कृतकार्य नहीं हुआ *। वे यह भी कहते हैं कि सिबी (Sibae) हैरेक्लीज़ के अनुयायियों के वंशज हैं। ये अपने वंश का चिन्ह धारण करते हैं, क्योंकि ये हैरेक्लीज के ऐसा खाल पहनते हैं, गदा ले चलते हैं और बैल तथा खच्चरों पर कड़ी का दाग देते हैं। इस कथा का समर्थन करने के लिये वे काकेशस और प्रोमीथियस की कथाओं की सहायता लेते हैं। पोन्टस (Pontus) से वे इन्हें इस सामान्य बहाने पर यहां ले आते हैं कि उन्हों ने पैरोपैमीसेडी (Paropamisadae) के देश में एक पवित्र गुफा देखा था। इसे वे प्रोमीथियस का बंदीगृह कहते हैं, जहां हैरेक्लीज उसे

---

* कनिङ्गहम साहब का मत है कि रानीघाट का भग्नावशिष्ट दुर्ग प्राचीन आर्योनस का पहाड़ी गढ़ है। रानीघाट ओहिन्द से सोलह मील पश्चिम है।

छुड़ाने आया था और यह वास्तव में काकेशस था, जिसे ग्रीक लोग कहते हैं कि प्रोमीथियस ही बंधा था *।

सप्तचत्वारिंशत पत्रखण्ड।

एरियन—इण्डिका ५-४-१२।

[इसका अनुवाद देखो।]

षट्चत्वारिंशत पत्रखण्ड।

जोसिफस—विरुद्ध एपियन १-२०।

नबुचद्नोसर (Nabuchodonosar) के विषय में।

(पत्रखण्ड ४६)।

अपनी इण्डिका के चतुर्थ खण्ड में मेगास्थनीज़ भी यही विचार प्रकट करता है कि जहां वह यह दिखलाने की चेष्टा करता है कि बैबिलोनिया देशवासियों का उक्त राजा (नबुचदोनसोर) (Nabuchodonosor) हेरेक्लीज़ से अधिक प्रतापी और वीर था, क्योंकि उस ने आइबेरिया का भी विजय किया था।

पत्रखण्ड अष्टचत्वारिंशत (क)।

जोसिफस—१०-२-१।

[यहां पर नबुचदोनसोर ने टहलने के लिये पत्थर के ऊंचे स्थान बनवाये जो देखने में पर्वत प्रतीत होते थे और वे इस रीति से बने थे कि प्रत्येक प्रकार के वृक्ष भी उस पर

---

* ग्रीक लोग भारतवर्ष के देवताओं को सम्भवत: अपना ही देवता समझते थे। यदि यह सत्य है तो शिव जी को बैकस और श्रीकृष्ण को हेरेक्लीज़ समझते होंगे।

लगाये जा सके थे। उस की स्त्री मीडिया (Media) देश में पली थी; अतएव वह अपने बाल्यकाल के समान स्थानों में रहना पसन्द करती थी] अपनी इण्डिका के चतुर्थ खण्ड में मेगास्थनीज़ भी इन बातों का नाम लेता है और इसी प्रकार यह दिखलाने की चेष्टा करता है कि यह राजा हेरैक्लीज़ से भी अधिक साहसी और प्रतापी था, क्योंकि उस ने लीबिया (Lybia) और अधिकांश आइबेरिया का भी विजय किया था।

पत्रखण्ड अष्टचत्वारिंशत (ख)।

जोसफ०।

कई प्राचीन इतिहासलेखकों में से जोनबूचदोनसोर का वर्णन करते हैं, जोसिफस (Josephos) बीरोसस (Bérôsos) मेगास्थनीज़ और डायोक्लीज़ का नाम लेता है।

पत्रखण्ड अष्टचत्वारिंशत (ग)।

जो० सिन्सेल।

अपनी इण्डिका के चतुर्थ खण्ड में मेगास्थनीज़ नबूचदोनसोर को हेरैक्लीज़ से भी अधिक प्रतापी प्रदर्शित करता है, क्योंकि बड़े साहस और निर्भयता से उस ने लीबिया तथा आइबेरिया के अधिकांश पर विजय प्राप्त किया था।

एकोनपञ्चाशत पत्रखण्ड।

एबिडेन।

नबूचंड्रोसर के विषय में।

मेगास्थनीज़ कहता है कि नबूचंड्रोसर ने जो हेरैक्लीज़ से भी अधिक प्रतापी था, लीबिया तथा आइबेरिया पर आक्रमण किया

और उन्हें जीत कर उन के मनुष्यों का एक उपनिवेश पौन्टस (Pontus) के दाहिनी ओर स्थापित किया।

पञ्चाशत पत्रखण्ड।

एरियन—इण्डिका ७ ९।

[एरियन का अनुवाद देखो।]

पत्रखण्ड पञ्चाशत (क)।

प्लिनी – इतिहास ९-५५।

मोतियों के विषय में।

कुछ लेखक कहते हैं कि सीपों के झुण्ड में मधुक्खियों की समान बड़े २ और अधिक सुन्दर सीप उन के नेता होते हैं, ये पकड़े जाने से अपने को बचाने में बड़े चतुर होते हैं। इन्हें डूबी मारनेवाले उत्कण्ठा से खोजते हैं। यदि ये पकड़े जाते हैं तो अन्य सीप सहज ही में जालबद्ध हो जाते हैं, क्योंकि वे चारों ओर घूमते रहते हैं। तब ये मिट्टी के घड़ों में रखे जाते हैं जिस में वे नमक के नीचे गाड़ दिये जाते हैं। इस रीति से मांस सब गल जाता है और जमा हुआ कड़ा पदार्थ नीचे बैठ जाता है।

एक पञ्चाशत पत्रखण्ड।

फ्लेगन० मिरब—३३।

पैण्डेयन (Pandaian) भूमि के विषय में।

(पत्रखण्ड ३०-६)

मेगास्थनीज़ कहता है कि पैण्डेयन देश की स्त्रियां छः हीं वर्ष में प्रसव करती हैं।

पत्रखण्ड पञ्चाशत (ख)।

प्लिनी—इतिहास ६-२१-४-५।

भारतवासियों के प्राचीन इतिहास के विषय में।

सब जातियों में भारतवासी ही केवल अपना देश छोड़ कर दूसरे देश में नहीं जा कर बसे हैं। बैक्कस पिता से ले कर सिकन्दर तक एक सौ चौवन राजा हुए, जिन्हों ने ६४५१ वर्ष तीन महीने तक राज्य किया।

सोलिनस ५२-५।

पिता बैक्कस ही ने पहले पहल भारतवर्ष पर आक्रमण किया था और वे ही सब से प्रथम भारतवासियों पर विजयी हुए थे। उन से लेकर सिकन्दर तक ६४५१ वर्ष तीन मास गिने जाते हैं। इस के बीच में एक सौ तिरपन राजाओं ने राज्य किया। इन्हीं कि संख्या से वह समय निर्धारित किया जाता है।

पञ्चचत्वारिंशत पत्रखण्ड।*

एरियन ७-२-३—८

कलेनस और मण्डेनिस के विषय में।

इस से विदित होता है कि यद्यपि सिकन्दर यश प्राप्त करने को घोर इच्छा के वशीभूत था तथापि वह उत्तम पदार्थों को परखने की शक्ति से सर्वथा रहित नहीं था। जब वह [illegible] पहुंचा और दिगम्बरदार्शनिकों को [illegible] उन में से एक

---

* एरियन के "सिकन्दर की चढ़ाई" नामक पुस्तक से एक खण्ड लिया गया है उस को "इण्डिका" नहीं जैसा कि ऊपर कहा गया है।

को अपने सम्मुख बुलाने की उसे इच्छा हुई, क्योंकि उन की सहिष्णुता का वह आदर करता था। डेण्डेमिस इन में सब से बड़ा था और सब उस के शिष्य के समान रहते थे। उस ने केवल अपने ही जाने से अस्वीकार नहीं किया किन्तु दूसरों को भी नहीं जाने दिया। कहा जाता है कि उस ने यह उत्तर दिया था।—मैं भी ज्युस का वैसा ही पुत्र हूं जैसा कि सिकन्दर है और मैं सिकन्दर का कुछ लेना नहीं चाहता (क्योंकि मैं वर्तमान अवस्था में भली भांति हूं) क्योंकि मैं देखता हूं कि जो लोग सिकन्दर के साथ इतने समुद्र और पृथ्वी पर घूमते हैं उन्हें कुछ लाभ नहीं होता और न उन के पर्यटन ही का अन्त होता। इस लिये सिकन्दर जो कुछ दे सकता है उन सबों की मैं इच्छा नहीं करता और न मुझे इस बात का डर है कि मुझे दबा कर वह मेरा कुछ कर सकता है। यदि मैं जीवित रहा तो भारतभूमि ऋतुओं के अनुकूल फल देकर मेरी प्राणरक्षा में समर्थ है और यदि मैं मर गया तो इस दूषित शरीर के सङ्ग से मुक्त हो जाऊंगा। उसे स्वतन्त्र प्रकृति का मनुष्य जान कर सिकन्दर ने बलप्रयोग नहीं किया। यह कहा जाता है कि उस ने कलेनस नामक, उस स्थान के एक दार्शनिक को अपने निकट रखा था; किन्तु मेगास्थनीज़ कहता है कि वह आत्मसंयम एकदम नहीं जानता और दार्शनिक लोग स्वयम् कलेनस की बड़ी निन्दा करते हैं, क्योंकि वह उन लोगों के सुख को छोड़ कर ईश्वर के अतिरिक्त दूसरे प्रभु का सेवन करने चला गया।

सन्दिग्ध पत्रखण्ड।

द्विपञ्चाशत पत्रखण्ड।

इलियन—इतिहास १२—८.

हाथियों के विषय में।

(पत्रखण्ड ३६. १०, ३७. १०।)

हाथी जब खुले चरता है तब साधारणतः जल पीता है; किन्तु जब युद्ध की थकावट उसे सहनी पड़ती है तब उसे मद्य मिलता है। किन्तु उस प्रकार का मद्य नहीं जो अङ्गूर से निकलता है, पर दूसरा जो चावल से बनाया जाता है। इन के सेवक उन से आगे भी बढ़ जाते हैं और इन के लिये फूल तोड़ लाते हैं क्योंकि इन्हें मधुर गन्ध बहुत प्रिय लगता है। इस लिये लोग उन्हें मैदान में ले जाते हैं और वहीं अत्यन्त मीठी सुगन्धि के प्रभुत्व में रख कर उन्हें सिखाते हैं। हाथी के सम्मुख शिक्षक फूलों की टोकरी लिये रहता है और हाथी फूलों को उन की गन्ध के अनुसार चुन कर उस टोकरी में रखता है। जब एकत्र करना समाप्त हो जाता है और टोकरी भर जाती है तब वह स्नान करता है और पूर्ण रसिक के समान स्नान का सुख लूटता है। स्नान से लौट कर आने पर अपने फूलों को प्राप्त करने के लिये वह उत्सुक रहता है और उनके ले आने में कुछ देरी होती है तो चिक्करने लगता है और एक ग्रास भी नहीं खाता, जब तक उस के एकत्रित किये हुए सब फल उस के सम्मुख नहीं रखे जाते हैं। इस के उपरान्त अपनी सूंड़ से फूलों को टोकरी में से ले कर अपने भोजन के पात्र के चतुर्दिक छितरा

देता है और इस प्रकार इन की गन्ध को मानों अपने भोजन का स्वाद बनाता है। बहुत से फूलों को अपने बिछौने के ऊपर पुआल के ऐसा बिछा देता है, क्योंकि अपनी नींद को वह सुखप्रद और मधुर बनाना पसन्द करता है।

भारतवर्ष की हाथियां नव हाथ लम्बे और पांच हाथ चौड़े होते हैं। देश भर में प्रेसियन (Praisian) हाथी सब से बड़े होते हैं, उन के बाद तक्षिला के होते हैं।

त्रिपञ्चाशत पत्रखण्ड।

इलियन—इतिहास—३-४६।

एक श्वेत हस्ति के विषय में।

(पत्रखण्ड ३६-११, ३७-११।)

एक हाथी के शिक्षक को एक उजला हाथी का बच्चा मिला जिसे वह घर ले आया। वहां उसे पोस कर और क्रमश: अत्यन्त पोसुआ बना कर उस पर चढ़ता फिरता था। उस हाथी को वह बहुत प्यार करता था और वह हस्ति भी उस के प्रति प्रेम करता था, एवम् अपने अनुराग से भोजन देने का बदला देता था। भारतवासियों के राजा ने इस हस्ति के विषय में सुन कर उसे लेने की इच्छा की; किन्तु उस के स्वामी ने हस्ति के प्रेम को देख कर और निश्चय इस बात से दुखी हो कर कि इस का स्वामी अन्य पुरुष होगा उसे देना अस्वीकार किया और अपने प्रिय हस्ति पर चढ़ कर रेगिस्तान में एक पर्वत पर चला गया। राजा ने क्रुद्ध हो करके उस का पीछा करने के लिये मनुष्यों को यह आज्ञा देकर भेजा कि वे हाथी को पकड़

लें और उस मनुष्य को भी दण्ड देने के लिये ले आवें। भागने वाले के निकट पहुंच कर उन लोगों ने अपना अभीष्ट करना चाहा किन्तु उस मनुष्य ने आक्रमण करने वालों का विरोध किया और हाथी की पीठ पर से उन्हें रोका। हाथी भी अपने स्वामी की ओर से लड़ने लगा। पहले तो यही अवस्था थी किन्तु जब वह भारतवासी आहत हो कर नीचे गिरा तब वह हाथी, नमक का सच्चा, उस के आगे खड़ा हो कर उस की रक्षा करने लगा, जिस प्रकार कोई योद्धा अपने आहत साथी को ढाल से छिपा कर और उस के आगे खड़ा हो कर उस की रक्षा करता है। उस ने बहुत से आक्रमणकारियों को मार डाला और अवशिष्ट को भगा दिया। तब अपने पोषक को सूंड़ से लपेट कर और पीठ पर बिठा घर अपने हस्तिशाला में लेआया और सच्चे मित्र के समान उस के साथ रह कर उस की प्रत्येक प्रकार से रक्षा करता रहा।

ऐ मनुष्यो! कैसे नीच तुम हो। सदा प्रसन्नता से नाचते रहते हो जब तक कड़ाही के छनछनाने की मधुर ध्वनि तुम सुनते रहते हो और सदा तवाजों में धूम मचाये रहते हो, किन्तु विपत् के समय धोखा देते हो और व्यर्थ मित्रता के पवित्र नाम को कलङ्कित करते हो। *

---

* प्लुटार्क लिखित सिकन्दर की जीवनी में पोरस के हाथी का वर्णन मिलाओ।—"जब तक युद्ध होता रहा इस हाथी ने असाधारण प्रमाण अपनी बुद्धिमत्ता और राजा के शरीर के रक्षकत्व का दिया। जब तक राजा लड़ सका तब तक वह बड़े साहस से उस की रक्षा करता रहा और आक्रमण करनेवालों को हटाता रहा; किन्तु जब उस ने देखा कि भालाओं के बाहुल्य

चतुर्पञ्चाशत पत्रखण्ड ।

ब्राह्मण और उन के दर्शन के विषय में ।

(पत्रखण्ड ४१, ४४, ४५,)

भारतवर्ष के ब्राचमनों के विषय में ।

भारतवर्ष के ब्राचमनों में एक प्रकार के दार्शनिक होते हैं जो स्वतन्त्र जीवन धारण करते हैं और मांस तथा आग से पकाये हुए पदार्थ भोजन नहीं करते, फल ही खाकर सन्तोष करते हैं। वे इन फलों को वृक्ष से तोड़ते भी नहीं, किन्तु जब ये गिर पड़ते हैं ✢ तब उन्हें चुन कर खाते हैं। वे टगवेना (Tagvena) का जल पीते हैं। जीवन पर्यन्त वे नङ्गे फिरते हैं और कहते हैं कि यह शरीर आत्मा को आच्छादित करने के लिये ईश्वर से दिया गया है। वे मानते हैं कि ईश्वर ज्योतिस्वरूप है, किन्तु आंखों से जो हम लोग देखते हैं वैसी ज्योति वह नहीं है, न सूर्य अथवा अग्नि के ऐसा। ईश्वर को वे शब्दस्वरूप कहते हैं। इस शब्द से वे स्पष्ट वाक्य नहीं समझते, किन्तु इसे विवेक का कथन जानते हैं, जिस से ज्ञान का गुप्त तत्व बुद्धिमान् लोगों को ज्ञात होता है। यह ज्योति, जिसे वे शब्द कहते हैं और ईश्वर मानते हैं, केवल ब्राचमनों ही को विदित होती है, क्योंकि उन्हीं लोगों ने अहङ्कार का त्याग किया है, जो आत्मा का सब से

और आघातों की अधिकता से वह गिरा चाहता है तब वह धीरे से घुटने बैठ गया, बड़ी कोमलता से उस के शरीर से प्रत्येक शूल को निकाल लिया "।

✢ सम्भवतः यह संस्कृत तुङ्गवेणा का अपभ्रंश है, जो आज कल तुङ्गभद्रा कहलाती है।

वाह्य आच्छादन है। इस प्रकार के मनुष्य मृत्यु का घृणा के साथ उपेक्षा करते हैं और ईश्वर का नाम विशेष आदर की ध्वनि से लेते हैं एवम् गीतों से उन की पूजा करते हैं। उन्हें स्त्रियां नहीं होतीं और वे सन्तान उत्पादन नहीं करते। जो मनुष्य उन के ऐसा जीवन व्यतीत करना चाहते हैं वे सदा के लिये नदी को उस पार से उल्लङ्घन कर के चले आते हैं और अपने देश को कभी नहीं लौटते। ये भी ब्राचमन कहलाते हैं यद्यपि उस प्रकार से ये जीवन नहीं धारण करते, क्योंकि इस देश में स्त्रियां रहती हैं जिन से उस स्थान के निवासी उत्पन्न हुए हैं और जिन से ये सन्तान उत्पादन करते हैं। उस शब्द के विषय में जिसे ये ईश्वर कहते हैं, ये मानते हैं कि इसे शरीर होता है और जिस प्रकार मनुष्य उन का वस्त्र धारण करता है उसी प्रकार इस का शरीर वाह्यआच्छादन है। जब यह शरीर को परित्याग करता है तब आंखों से दीख पड़ता है। ब्राचमन लोग कहते हैं कि जो शरीर उन लोगों को आच्छादित करता है उस में युद्ध होता रहता है। वे शरीर को युद्धों का जड़ मानते हैं और उस के विरुद्ध इस प्रकार लड़ते हैं जैसे योद्धा शत्रु के प्रतिकूल लड़ते हों। वे यह भी समझते हैं कि सभी मनुष्य युद्ध के बन्दी के समान बद्ध हैं, उन के शत्रु आन्तरिक हैं। यथा काम, अति भोजन में आसक्ति, क्रोध, हर्ष, दुःख, उत्कट इच्छा इत्यादि। जो मनुष्य इन सभों को जीतता है वही ईश्वर के निकट जाता है। इसी कारण डण्डेमिस को, जिस का सिकन्दर मेकीडन ने दर्शन किया था, ब्राचमन लोग देवता मानते हैं, क्योंकि उस ने शरीर को युद्ध में जीत लिया था, किन्तु कलेनस की निन्दा किया करते हैं, क्योंकि यह उस के

दर्शन से विमुख हो गया था। इस लिये ब्राह्मण जब शरीर को झाड़ कर फेंक देते हैं तब वे स्वच्छ ज्योति को देखते हैं, जिस प्रकार मछलियां जल के ऊपर आकर सूर्य की ज्योति को देखती हैं।

पञ्चपञ्चाशत पत्रखण्ड।

पैलेड।

कलेनस और अण्डनिस के विषय में।

(पत्रखण्ड ४१· १८, ४४, ४५)

ब्राम्मन लोग जो फल मिल जाता है वही खाते हैं और उन जंगली जड़ियों से प्राणरक्षा करते हैं जिन्हें पृथ्वी बहुत उत्पन्न करती है, ये केवल जल पीते हैं। जङ्गलों में ये फिरते रहते हैं और रात्रि के समय वृक्ष के पत्तों की शय्या पर शयन करते हैं। ... ...

... ...

"तब तुम्हारे कपटी मित्र कलेनस का यह विचार है, किन्तु उस से हम लोग घृणा करते हैं और उसे चरण तले रखते हैं। यद्यपि उस ने तुम लोगों की बहुत हानि की, तुम उस का आदर और पूजा करते हो, किन्तु हम लोगों की सङ्गति से वह घृणा के साथ निकम्मा समझ कर निकाल दिया गया है। और ऐसा क्यों न हो? जब मुद्राप्रेमी कलेनस उन्हीं वस्तुओं का आदर करता है, जिसे हम लोग पैर से कुचलते हैं। वह तुम्हारा अयोग्य मित्र है हम लोगों का मित्र नहीं है। निश्चय वह हत-भाग्य जीव अत्यन्त दुःखी कृपण से भी अधिक घृणायुक्त दया

का पात्र है, क्योंकि धन के प्रेम में उस ने आत्मा का सत्यानाश किया। अतएव न हमी लोगों के योग्य था न ईश्वर ही के साथ मैत्री करने योग्य था। इसी से न तो वह जङ्गलों में रह कर सोच आदिकों से रहित जीवन व्यतीत करने में सन्तुष्ट हुआ और न वह परकाल में सुखी होने की आशा से सुखी हुआ, क्योंकि धन के लोभ से उस ने अपनी भागहीन आत्मा का जीवन ही नष्ट कर दिया।

"किन्तु हम लोगों में एक ऋषि डण्डेमिस हैं जिन का घर जङ्गल है, जहां वह पत्तियों की शय्या पर शयन करता है और जहां निकट ही शान्ति का स्रोत है जिसे वह पान करता है मानों अपनी माता का दूध वह पी रहा हो।"

राजा सिकन्दर यह सब सुन कर उस जाति के मनुष्यों का सिद्धान्त सुनने के लिये इच्छुक हुआ और उन के गुरु डण्डेमिस को बुला भेजा। ... ...

उसे बुलाने के लिये ओनेसिक्रेटीस (Onesikrates) भेजा गया। जब उस ने महर्षि को पाया तब कहा "ऐ ब्राह्मणों के गुरु तुम्हारी जय हो। महाबली देव ज्युस का पुत्र सिकन्दर, सब मनुष्यों का अधिपति तुम को बुला रहा है। और यदि तुम उस की बात मानो तो वह तुम्हें बड़ी २ और अत्युत्तम वस्तु पारितोषिक देगा, किन्तु यदि तुम अस्वीकार करोगे तो वह तुम्हारा शिर काट लेगा।

डण्डेमिस प्रसन्नतापूर्वक मुस्कुराते हुए अन्त तक यह सुनता रहा, किन्तु अपनी पत्तों की शय्या से शिर भी नहीं उठाया और उसी प्रकार पड़े २ यह घृणायुक्त उत्तर दिया :—

"ईश्वर जो सब का राजा है किसी को हानि नहीं पहुंचाता.

किन्तु ज्योति, शान्ति, सजीवता, जल और मनुष्य के शरीर तथा आत्मा का कर्त्ता है और बुरी वासनाओं से निर्लिप्त होने के कारण इन्हें वह स्वीकार कर लेता है, जब मृत्यु इन्हें मुक्त करती है। वही एक ईश्वर मेरे पूजा करने का पात्र है जो हत्या से घृणा करता है और कोई युद्ध नहीं ठानता। किन्तु सिकन्दर ईश्वर नहीं हैं, क्योंकि उसे मरणदुःख अनुभव करना पड़ेगा। और कैसे उस के समान कोई पुरुष संसार का अधिपति हो सकता है, जो अभी तक टाइबरोबोआस (Tiberoboas) उस किनारे भी नहीं पहुंचा है और समस्त संसार के राज्यसिंहासन पर नहीं बैठा है? इस के अतिरिक्त सिकन्दर नरक में जीवित नहीं गया है, न वह पृथ्वी के मध्यभागवर्ती उन देशों को जानता जिस ओर से सूर्य का पथ गया है। यहां की जातियों ने सिकन्दर का नाम तक नहीं सुना है। यदि उस का वर्तमान राज्य उस की इच्छा के अनुकूल विस्तृत नहीं है तो गङ्गा नदी के पार उसे जाने दो। वहां उसे मनुष्यों के रखने योग्य भूमि मिलेगी, यदि इधर के देश में वह नहीं अंट सकता। किन्तु यह जान रखो कि जो सिकन्दर मुझे देता है और जिन वस्तुओं को देने की प्रतिज्ञा करता है वे सब मेरे एक भी काम की नहीं हैं। किन्तु जिन वस्तुओं को मैं बहुमूल्य समझता हूं और वास्तविक काम का समझता हूं वे ये ही पत्र हैं जो मेरे घर हैं। ये हरे भरे पौधे हैं, जिन से मुझे उत्तम भोजन मिलता है और यही जल है जिसे मैं पीता हूं। अन्य सब धन और वस्तु जो बड़े दुःख से एकत्र किये जाते हैं वे एकत्र करने वाले को विपत् पहुंचाते हैं और दुःख तथा कष्ट के कारण होते हैं, जिन से प्रत्येक मनुष्य का जीवन भरा रहता है। घर में

जङ्गली पत्तों पर पड़ा रहता हूं और मेरे पास रचा करने योग्य कोई वस्तु नहीं रहने के कारण मैं सुख की नींद सोता हूं। यदि मुझे सुवर्णरचा करने को रहता तो वह नींद आने नहीं देता। पृथ्वी मुझे सब कुछ देती है जिस प्रकार माता बच्चे को दूध देती है। जहां इच्छा होती है वहां मैं जाता हूं और मुझे किसी बात की चिन्ता नहीं है जिस से मैं इच्छा के विरुद्ध अपने को दुःखी करूं। यदि सिकन्दर मेरा शिर काट लेगा तो वह मेरी आत्मा का नाश नहीं कर सकता। केवल मेरा निःशब्द शिर रह जायगा, किन्तु आत्मा अपने प्रभु के पास चली जायगी और इस शरीर को फटे वस्त्र के समान पृथ्वी पर छोड़ देगा जहां से यह बना था। तब मैं जीवात्मा हो कर उस ईश्वर के निकट पहुंचूंगा जिस ने हम लोगों को शरीर में निबद्ध करके इस पृथ्वी पर यह देखने के लिये छोड़ दिया है कि यहां हम लोग उस की आज्ञा का पालन करते हैं या नहीं। और जब हम लोग यहां से उस के सम्मुख जायंगे तब वह हम लोगों के जीवन का व्यौरा पूछेगा, क्योंकि वह सब पापों का विचारपति है और पीड़ित मनुष्यों की आह पीड़कों का दण्ड है।

"अतएव सिकन्दर इन धमकियों से उन लोगों को डरावे जो स्वर्ण और धन चाहते हों और जो मृत्यु से भय खाते हों। हम लोगों के विरुद्ध ये अस्त्र तुल्य रूप से अशक्त हैं, क्योंकि ब्राम्मन लोगों को न सोना प्रिय है और न वे मृत्यु से डरते हैं। इस से तुम जाओ और सिकन्दर से यह कहो कि जो कुछ तुम्हें है उस से डण्डेमिस को कोई आवश्यकता नहीं है, अतएव वह तुम्हारे निकट नहीं आवेगा, किन्तु यदि तुम डण्डेमिस से कुछ चाहते हो तो उस के निकट जाओ।"

ओनेसिक्रेटोस से इस वार्तालाप का विवरण सुन करके सिकन्दर को डण्डेमिस के देखने की और भी अधिक उत्कण्ठा हुई और यद्यपि वह बूढ़ा और नङ्गा था तथापि अनेक जातियों का विजेता सिकन्दर उसी को अपने से सबल पाया इत्यादि।

पत्रखण्ड पञ्चपचाशत (क)

एम्ब्रासियस (Ambrosius)

कलेनस और मण्डेनिस के विषय में।

ब्राचमन लोग पशुओं के ऐसा जो भूमि पर मिलता है उसी को खाते हैं; जैसे वृक्षों की पत्तियां और जङ्गली जड़ी आदि।

"कलेनस तुम्हारा मित्र है किन्तु हम लोग उस से घृणा करते हैं और उसे लात मारते हैं। जिस ने तुम लोगों की बड़ी हानि की वही तुम से आदृत और पूजित होता है, किन्तु हम लोग उसे निकाल बाहर करते हैं क्योंकि वह किसी महत्त्व का नहीं है। जिन वस्तुओं को हम लोग नहीं चाहते वे ही कलेनस को धन के लोभ के कारण प्रसन्न करते हैं। किन्तु वह हम लोगों का नहीं था। उस ने अपनी आत्मा की बड़ी क्षति की और उस का नाश ही कर दिया जिस कारण से वह ईश्वर और हम लोगों का मित्र होने योग्य नहीं है। वह इस संसार में जङ्गलों की शान्ति के योग्य नहीं था और न वह परकाल ही में यश प्राप्त करने की आशा कर सकता है।"

जब सिकन्दर जङ्गल में आया तब राह में उस ने डन्डेमिस को नहीं देखा......

अतएव उक्त दूत ने डन्डेमिस के निकट पहुंच कर इस प्रकार उस से सम्बोधन किया।

"जुपिटर के पुत्र और मानव जाति के राजा सिकन्दर ने आज्ञा दी है कि तुम शीघ्र उस के निकट जाओ, क्योंकि यदि तुम जाओगे तो वह तुम्हें बहुत दान देगा, किन्तु यदि तुम जाने से अस्वीकार करोगे तो इस अवज्ञा के लिये वह तुम्हारा शिरच्छेदन करेगा।"

जब ये शब्द डनडेमिस के कानों में पड़े तब वह अपने पत्र-शय्या पर से उठा नहीं जिस पर वह सोया था, किन्तु पड़े ही पड़े और मुस्कुराते हुए यों उत्तर दिया—"सर्वशक्तिमान् ईश्वर किसी की हानि नहीं करता, किन्तु जो मर जाता है उसे जीवन-ज्योति पुनः प्रदान करता है। इस लिये वही एक मेरा प्रभु है जो हत्या करने का प्रतिषेध करता है और युद्ध नहीं उभाड़ता। पर सिकन्दर ईश्वर नहीं है, क्योंकि उसे मरना होगा। तब वह कैसे सब का प्रभु हो सकता है? अभी तक टाइबरोबोआस (Tyberoboas) नदी के पार नहीं गया है, न सारे संसार को जिस ने अपना घर बनाया है, न गेडेस (Gades) का उल्लङ्घन किया है और न पृथ्वी के मध्य में सूर्य का पथ देखा है। इस से बहुत सी जातियां उस का नाम भी नहीं जानतीं। यदि उस का अधिकृत देश उस को नहीं धारण कर सकता तो वह नदी को उत्तीर्ण कर जाय, उसे ऐसी भूमि मिलेगी जो उसे रख सकेगी। मेरा घर पत्ते हैं, निकटस्थ वनस्पतियां खा कर मैं रहता हूं और जल पीता हूं। मैं उन वस्तुओं से घृणा करता हूं जो परिश्रम से मिलती हैं, जो नाशमान हैं और जो उन के चाहनेवालों तथा रखनेवालों को दुःख के अतिरिक्त कुछ नहीं देते। इस से मैं निर्भय सुख करता हूं और आंखें बन्द किये हुए किसी बात की चिन्ता नहीं करता। यदि मैं

सुवर्ण रखने की इच्छा करूं तो अपनी नींद का मैं नाश करूंगा। जिस प्रकार माता अपने बच्चे को सब पदार्थ देती है उसी प्रकार पृथ्वी मुझे देती है। जब मेरी इच्छा होती है तब मैं चलता हूं और जब मैं नहीं चाहता तब कोई चिन्ता रूपी आवश्यकता मुझे नहीं चला सकती। यदि वह मेरा शिर काटने की इच्छा करे तो मेरी आत्मा नहीं ले सकता। वह केवल पड़ा हुआ शिर लेगा, किन्तु मेरी आत्मा शिर को वस्त्र के टुकड़े के समान छोड़ कर प्रस्थान कर जायगी और इसे पृथ्वी पर छोड़ जायगी जहां से यह बना था। किन्तु जब मैं जीवात्मा हो जाऊंगा तब उसी ईश्वर के निकट ऊपर चला जाऊंगा जिस ने शरीर के भीतर निबद्ध किया था। ऐसा करने के समय उस ने हम लोगों की परीक्षा लेनी चाही कि उसे छोड़ने के बाद इस संसार में हम लोग कैसे रहते हैं। और जब हम लोग उस के निकट उपस्थित होंगे तब वह हम लोगों के इस जीवन का ब्यौरा पूछेगा। उस के निकट खड़ा हो कर मैं अपनी हानि देखूंगा और उस का विचार उन लोगों पर सुनूंगा जिन्हों ने मुझे क्षति पहुंचायी, क्योंकि पीड़ित मनुष्यों की आह उस के पीड़कों के दण्ड होते हैं।

"इस प्रकार सिकन्दर उन लोगों को धमकावे जो धन चाहते हैं अथवा मृत्यु से डरते हैं, जिन दोनों से मैं घृणा करता हूं। क्योंकि ब्राचमन न सोना को प्यार करते हैं और न मृत्यु ही से भय खाते। अतएव जाओ और सिकन्दर से यह कहो:— "डण्डेमिस तुम्हारा कुछ नहीं चाहता" किन्तु यदि उस का तुम कुछ चाहते हो तो उस के निकट जाने से घृणा मत करो।"

जब सिकन्दर ने द्विभाषी के द्वारा ये बातें सुनीं उसे ऐसे

मनुष्य को देखने की और भी उत्कण्ठा हुई, क्योंकि जिस ने अनेक जातियों को परास्त किया था वह एक वृद्ध नग्न मनुष्य से परास्त हो गया।

षष्ठपञ्चाशत पत्रखण्ड।

प्लिनी—इतिहास

भारतीय जातियों की सूची।

हिफेसिस (Hyphasis) से सेल्युकसनाइकेटर के लिये निम्न यात्राएं की गयीं।—हेसिड्रस (Hesidrus) तक १६८ मील और उतने ही मील जोमानेस (Jomnes) नदी, तक (कुछ प्रतियां ५ मील अधिक जोड़ती हैं)। वहां से गङ्गा तक ११२ मील। र्होडोफा (Rhodopha) तक ११९ मील (दूसरे ३२५ देते हैं)। कलिनिपक्स नगर तक १६७ मील—५००। अन्य लोग २६५ मील लिखते हैं। वहां से जोमानेस और गङ्गा के सङ्गम तक ६२५ मील (बहुत लोग १३ मील और जोड़ते हैं), और पालीबोथ्रा तक ४२५ मील। गङ्गा के मुख तक ७३८ मील। *

---

* हस्तलिखित पुस्तकों के अनुसार ६३८ या ६३७ मील। ये सब स्थान राजपथ पर थे जो सिन्ध से पालीबोथ्रा तक गया था। हेसीड्रस = सतलज। हिफेसिस = बेयास। दोनों के सङ्गम के थोड़े नीचे प्रस्थान का स्थान था। वहां से राह सीधे जोमानेस के किनारे आधुनिक बरिया के निकट जाती थी। जोमानेस यमुना यहां से गङ्गा के किनारे ११२ मील हस्तिनापुर के निकट होता है। र्होडोफा आधुनिक दभाई (Dabbai) समझा जाता है जो अनूप शहर से १२ मील दक्खिन है। कलिनोयक्स को मैनर्ट और लैस्सेन साहब कन्नौज कहते हैं, किन्तु सेण्ट

इमाअस (Imaus) पर्वत (जिस का अर्थ देशीय भाषा में

मार्टिन साहब इक्षुमती के किनारे एक स्थान बताते हैं। यह नदी काली नदी कहलाती होगी, क्योंकि अब भी यह कालिनी और कालिन्द्री नाम से पुकारी जाती है। 'पक्स' पक्ष का अपभ्रंश है जिस से ज्ञात होता है कि यह नगर कालिनी नदी के निकट स्थित होगा।

यहां जो दूरी दी गयी है उस में लोगों का मतभेद है। कुछ इस में से वास्तविक दूरी से नहीं मिलती। सेण्ट मार्टिन साहिब ने यह सिद्ध किया है कि वे अधिकांश सत्य हैं। उन का विचार निम्न है :—

	मील	स्टेडियम
हेसिड्रस से जोमानिस तक	१६८	१३४४
जोमानिस से गङ्गा तक	११२	८९६
वहां से र्होडोफा	११९	९५२
हेसिड्रस से र्होडोफा (सीधी राह से)	३२५ मील	२६००
र्होडोफा से कलिनिपक्स तक	१६७	१३३६
हेसिड्रस से कलिनीपक्स	५६५	४५२०
कलिनिपक्स से गङ्गा औ जोमानिस के सङ्गम तक	(२२७)	(१८१६)
जोमानिस से गङ्गा और जोमानिस के सङ्गम तक	६२५	५०००

प्लिनी के अनुसार नदियों के सङ्गम से पालीबोथ्रा ४२५ मील है, किन्तु वस्तुतः यह २४८ मील है, इस से ज्ञात होता है कि २४५ अथवा २५४ के अङ्क उलट कर ४२५ हो गये हैं। पालीबोथ्रा से गंगा के मुख तक वह ६३८ मील लिखता है। पटने से तामलुक ४८० रोमन मील है। नदी से जाने से अधिक पड़ेगा।

बफोला होता है) एमोडस (Emodus) * का एक अंश है। एमोडस पर्वत श्रेणी से जातियों का नाम लेना तूल नहीं होगा। पहले इसरी (Isari) कौसिरी (Cosyri) और इज़गी (Izgi) है उस के बाद पर्वतों पर चिसिओटोसागी † (Chisiotosagi) और ब्राचमनी हैं। ब्राचमनी के कई उपजातियां हैं जिन में एक मैक्कोकलिङ्गी (Maccocalingæ) है ‡। प्रिनास (Prinas) और कैनास (Cainas) [जो गङ्गा में गिरती है] दोनों नदियां

---

* हिमवत् या हिमाद्रि से निकला है।

† ये चारों जातियां काश्मीर में या उस के पास पास निवास करती थीं ; दूसरी का कुछ पता नहीं है। कौसिरी का महाभारत में खसीरा लिखा है। सम्भवत: ये गुजरात के काठियों की खाचर उपजाति हैं। चिसिओटोसागी अथवा चिरिओटो-सागी और चिकोनी एक ही होंगे। सागी का अर्थ शक सम्बन्धी हो सकता है। शक लोग भारत में आर्यों से पहले आये थे। मनु भी उन का नाम लेते हैं (१०-४४) यदि चिरोटोसागी शुद्ध पाठ है तो वे निश्चय किरात होंगे।

‡ प्लिनी काश्मीर के बाद गङ्गा के मुख के निकट स्थित देशों में चला जाता है। यहां ब्राचमनी को वह सर्वोच्च जाति नहीं कहता, किन्तु उन्हें शक्तिमान् बताता है और उन के कई उपजातियों का नाम लेता है। मैक्कोकलिङ्गी उन में एक है। इस के अतिरिक्त गङ्गरिदी-कलिङ्गी (Gangaridle-kaeingæ) और मोडोगलिङ्गी (Modogalingæ) भी कलिङ्गी जाति के विभाग हैं। कलिङ्गी जाति गङ्गा के मुख से लेकर समुद्र के किनारे बहुत दूर तक फैली हुई थी, किन्तु पीछे उड़ीसा से आगे इस का विस्तार नहीं था। महाभारत में लिखा है कि

जलयात्रा करने योग्य हैं * । कलिङ्गी जाति समुद्र के अत्यन्त निकट है और कुछ ऊपर मण्डिआई (Mandei) और मेली (Melli) हैं जिन के देश में मैलस (Mallus) पर्वत है । इस जिले की सीमा गङ्गा है ।

(२२) यह नदी माइल के समान अज्ञात स्थान से निकलती है और उसी के ऐसा जिन देशों से हो कर बहती है उन्हें जलमग्न करती है । कुछ लोग कहते हैं कि यह स्कीदियन पर्वतों से निकलती है और इस में उन्नीस नदियां गिरती हैं,

---

ये लोग अङ्ग तथा तीन अन्य जातियों के साथ मगध और समुद्र के बीच में रहते थे । मैक्कोकलिङ्गी कलिङ्गी जाति की मघ उपजाति है । सेन्टमार्टिन साहब कहते हैं कि मघ अनार्य थे जो बिहार, अर्रकान, आसाम, नेपाल और उड़ीसा में फैले हुए थे । अब भी उड़ीसा में वे मगोदा कहलाते हैं, ये ही मैक्कोकलिङ्गी कहे जा सकते हैं । मोडोगलिङ्गी सम्भवत: मनु के मद उपनिवेशी हैं । मनु आर्यावर्त के म्लेच्छों में इन की गणना करते हैं । मुङ्गेर के ताम्रपत्र में भी ये नीच जाति लिखे गये हैं । (As. Res. Vol. I. p. 126 Calcutta 1788) प्लिनी कहता है कि ये गङ्गा के एक बड़े टापू में रहते थे । गलिङ्गी नाम में रहने से ज्ञात होता है कि यह समुद्र के तट पर होगा ।

* प्रिनास सम्भवत: तमसा नदी है जो पुराणों में पर्णाशा कहलाती है । कैनास कने (Cane) नदी होगी जो यमुना में गिरती है ।

जिन में जो कहे जा चुके हैं उन के अतिरिक्त कौण्डोचेटेस (Condochates) एरैन्नो बोआस, (Erannoboas) कौसोएगस (Cosoagus) और सोनस (Sonus) जलयान चलाने योग्य हैं। अन्य लोग कहते हैं कि यह अपनी स्रोत से गर्जती हुई निःसृत होती है और टापुएं तथा पहाड़ी धारे से गिर कर मैदान में एक झील में प्रवेश करती है। वहां से यह धीमे स्रोत से बाहर होती है। यह कम से कम आठ मील चौड़ी है और औसत बैठाने पर बीस स्टेडियम इस की चौड़ाई होती है। अन्त में इस का गहरापन ओरगुइ (एक सौ फुट) से कम नहीं है, जहां गङ्गारिडेस * रहते हैं। कलिङ्गों की राजधानी पर्थेलिस (Parthalis) कहलाती है। युद्ध के समय ६०,००० पदाति, सहस्र अश्वारोही और सात सौ हस्ति इन के राज की रक्षा करते हैं।

गङ्गरिदी या गङ्गारिडेस आधुनिक लोअर बङ्गाल में रहते थे। इन की कई उपजातियां थीं जो क्रमशः आर्यों की सभ्यता सीख गये। कोई २ कहते हैं कि यह नाम ग्रीक लोगों का दिया हुआ है, किन्तु उन के समय में प्रचलित अवश्य था। सिकन्दर के पूछने पर उसे उत्तर मिला था कि गङ्गा की तटवर्ती दो जातियां हैं—एक प्रसिआइ और दूसरी गङ्गारिडी। मार्टिन साहब उन की राजधानी पर्थलिस और वर्द्धमान मानते हैं। दूसरे लोग उसे महानदी के तट पर बताते हैं। टौलेमी ने उन की राजधानी गङ्गे (Gange) लिखा है जो कलकत्ता के निकट स्थित होगा। वर्जिल कवि भी इस जाति का नाम लेते हैं।

* साधारणतः यह गङ्गारिडेस कलिङ्गी लोग समझा जाता है। त्रिकलिङ्गी शब्द का प्रयोग कई शिला लेखों में मिलता है।

भारतवर्ष की अधिक सभ्य राज्यों में मनुष्य अनेक प्रकार की जीविका वृत्तियोंद्वारा जीवन व्यतीत करते हैं। कुछ भूमि जोतते हैं, कुछ योद्धा हैं, कुछ वणिक् हैं। बड़े२ कुलीन और धनी राज्य-कार्य में योग देते हैं, न्याय करते हैं और राजा के साथ सभा में बैठते हैं। पांचवें विभाग के मनुष्य प्रचलित दर्शन का मनन करते हैं, जो धर्म का स्वरूप धारण कर लेता है और इस प्रकार के मनुष्य जलते हुए चिता में प्रवेश कर के प्राणान्त कर देते हैं। इन जातियों के अतिरिक्त एक आधी जङ्गली जाति है जो सदा वर्णनातीत कड़े परिश्रम में व्यस्त रहती है। यह आखेट करती है तथा हाथियों को पोसती है। इन जन्तुओं को वे हल जोतने और चढ़ने के व्यवहार में लाते हैं और अपने पशुओं में उसे प्रधान समझते हैं। युद्ध में अपने देश की रक्षा करने के लिये वे बड़े लड़ाके हैं। इन की अवस्था बल और आकार देख कर वे युद्ध के लिये चुने जाते हैं।

गङ्गा में एक बृहत् द्वीप है जिस में एक ही जाति निवास करती है। इस का नाम मोडोगलिङ्गी है। इन के बाद मोडुबी (Modubae) मोलिन्डी (Molindae), युबेरी (Uberae) जिन्हें उस नाम का एक सुन्दर नगर है, गल्मोड्रोइसी, (Galmodroesi) पेटी, (Preti) कैलिस्सी (Calissae), ससुरी (Sasuri), पस्सली (Passalae), कोलुबी (Colubae) ओर्नियूली (Orxulae), अबली (Abali), टैलक्टी (Taluctae)* जातियां रहती हैं। इन का राजा पचास सहस्र पदाति सेना,

---

* प्रथमतः ये जातियां गङ्गा और हिमालय के मध्य रहती थीं। गल्मोड्रोइसी, पेटी, कैलिस्सी, ससुरी, और ओर्गॅन्यूली

चार सहस्र अश्वारोही तथा चार सौ हस्ति गर्त्तों से सज्जित

के विषय में कुछ ज्ञात नहीं है, न उन के नाम ही संस्कृत ग्रन्थों में पाये गये हैं। मोद्युबो मौतिब जाति के लिये आया है जिस का नाम ऐतरेय ब्राह्मण में गङ्गा के उत्तर तटवर्त्ती अनार्य जातियों के नाम के साथ लिया गया है। मोलिन्डी पुराणों का मालदा है। युवेरी भार जाति होगी। यह जाति आसाम तक फैली हुई है। भिन्न २ स्थानों में इसे भिन्न २ नाम से पुकारते हैं। यथा बोर, भोर, भौरी, बरेया, भाढ़िया, बरैया, बावरी, भरई इत्यादि। यद्यपि यह जाति पहले शक्तिमती थी किन्तु अब अत्यन्त नीच है। पस्सेली पाञ्चाल देशवासी हैं। कोल्युबी कौलूत या कोलूत हो सकते हैं। रामायण के चौथे काण्ड में पाश्चात्य जातियों के साथ इन के नाम की भी गणना की गयी है। वाराहसंहिता और मुद्राराक्षस नाटक में भी इन का नाम आया है। ये उत्तरीय यमुना के निकट निवास करते थे, सातवीं शताब्दि में चीनी यात्री ह्विवेनसेङ्ग इन के देश में आया था। उस ने इन का नाम किउल्यूतो (Kiu-lu-to) लिखा है। किन्तु यूल (Yule) साहेब पस्सेली का निवासस्थान दक्षिण पश्चिम तिर्हुत और कोल्युबी का निवासस्थान कोन्डोचेटीस (Kondochates) [गण्डकी] के किनारे गोरखपुर से पूर्वोत्तर और सारन से पश्चिमोत्तर बताते हैं। अबस्ती सम्भवतः दक्षिण बिहार के ग्वाला या हलवाई हैं। टैलक्टो ताम्रलिप्त के मनुष्य हैं जो महाभारत में भी दिया है। लङ्का के बौद्धलेखकों ने तमलित्ती लिखा है। ये सब आधुनिक तामलुक के नामान्तर हैं।

रखता था। फिर अनड्री * (Andrae) जाति है और भी अधिक शक्ति रखती है। इस के पास बहुत से ग्राम और तीस नगर दीवाल तथा दुर्गों से सुरक्षित हैं। इस के राजा को एक लक्ष पदाति, दो सहस्र अश्वारोही और सहस्र हस्तिबल है। डार्डी (Dardae) के देश में सोना अधिक होता है और सेटी † (Setae) के देश में चांदी।

किन्तु प्रसिआई जाति शक्ति और ख्याति में सब जातियों से बढ़े चढ़े हैं, केवल इसी प्रान्त में नहीं किन्तु समस्त भारतवर्ष में। उन की राजधानी पालीबोथ्रा है। यह नगर बहुत बड़ा और समृद्धिशाली है। कुछ लोग इसी के नाम के अनुसार यहां के निवासियों को तथा गङ्गा के किनारे समस्त देश को पालीबोथ्री कहते हैं। उन के यहां सदा वैतनिक छः लाख पदाति सेना, तीस सहस्र अश्वारोही और नवसहस्र हस्तिबल रखता है। इसी से उस के विभव की विपुलता का कुछ ध्यान हो सकता है।

इन के बाद किन्तु समुद्र से दूर मोनेडेस (Monedes) और

---

* इन्हें संस्कृत में आन्ध्र कहते हैं। गोदावरी और कृष्णा नदी के बीच में इन का बड़ा शक्तिशाली राज्य था। मेगास्थनीज़ के समय में नर्मदा तक ये बढ़ आये थे।

† सेटी संस्कृत भूगोल के साट या साठक हैं; ये दरदों के पड़ोस में रहते थे।

यूल साहब कहते हैं कि ये संस्कृत के सेका हैं और इन का वासस्थान बनास नदी के किनारे भाजपुर के निकट अजमेर से पूर्वदक्षिण था। (Indian Antiquary)

सुअरि (Suari) * रहते हैं इन्हीं के देश में मेलियस पर्वत है, जिस पर क्रम से छः मास जाड़े के दिनों में छाया उत्तर की ओर पड़ती है और ग्रीष्मकाल में छः मास दक्षिण की ओर पड़ती है †। बीटन कहता है कि इन प्रदेशों में उत्तर ध्रुव वर्ष में केवल एक बार दृष्टिगोचर होता है, सो भी केवल पन्द्रह दिनों के लिये। मेगास्थनीज़ कहता है कि ऐसा भारतवर्ष के कई स्थानों में होता है। दक्षिणध्रुव को भारतवासी द्रमस (Dramasa) कहते हैं। ओमानिस नदी मेथोरा (Methora) और करिसोबोरा (Carisobora) के बीच में पालीबोथ्री ‡ से होती हुई बहती है। गङ्गा के दक्षिणवर्त्ती प्रदेशों के निवासी सांवले होते हैं और सूर्य की गरमी से उन पर गाढ़ा रङ्ग चढ़ जाता है, यद्यपि वे एथियोपियन (Ethiopian) लोगों की नाईं कोयले के ऐसा काले नहीं होते। जितना ही वे सिन्धु नदी के निकट

---

* यूल साहब के अनुसार ये गङ्गपुर के निकट ब्राह्मणी के तट पर छोटानागपुर से दक्षिण पश्चिम रहते थे और लैसेन साहब के अनुसार ये महानदी के दक्षिण सोनपुर के निकट निवास करते थे, जहां यूल साहब सुअरि या सबरी (Sabarae) अथवा संस्कृत शवरों का निवासस्थान बताते हैं। लैसेन साहब इन्हें सोनपुर और सिंहभूम के बीच में रखते हैं।

† ऐसा केवल पृथिवी के मध्य भाग में इकुएटर के निकट होता है जो भारतवर्ष की दक्षिणसीमा से ५०० मील दूर है।

‡ पालीबोथ्री से यहां देश कहने का तात्पर्य है, न कि पाली-बोथ्रा नगर, जैसा कि रेनेल साहब तथा अन्य लोगों ने समझा है। मेथोरा मथुरा नगरी है, करिसोबोरा को क्राइसोबन (Chrysoban)

पहुंचते हैं उतना ही सूर्य का प्रभाव उन के रङ्ग से अधिक स्पष्ट होता है। सिन्धु नदी प्रसिआइ के राज्य की सीमा पर बहती है। कहा जाता है कि इस देश के पर्वतों में पिग्मी निवास करते हैं। अर्टेमिडोरस * (Artemidorus) के अनुसार दोनों नदियों के बीच में एक सौ इक्कीस मील की दूरी है।

(२३) इण्डस जिसे यहां के निवासी सिन्डस कहते हैं काकेशस पर्वतश्रेणी के परोपमिसस (Paropamisus) नामक पहाड़ से निकलती है। इस के जड़ † के सामने सूर्य उदय लेते हैं। इस में भी उन्नीस नदियां गिरती हैं, जिस में सब से विख्यात हिडेस्पे स (Hydaspes) है। हिडेस्पे स में चार नदियां गिरती हैं, कन्ताब्रा (Cantabra) में तीन। अकेसिनेस ‡ (Acesines) और हियेसिस दोनों जलयात्रा योग्य हैं, किन्तु अधिक जल नहीं मिलने के कारण यह पचास स्टेडियम से अधिक कहीं चौड़ी नहीं है और न पन्द्रह हाथ से अधिक गहरी है। इस से एक बहुत

कादसीबोरका, कादसोबोराम भी लेखकों ने लिखा है। कनिङ्हम साहब कहते हैं कि यह वृन्दावन होगा जिस का दूसरा नाम कालिकावर्त्त था। यूल साहब इसे वटेश्वर और लैसेन आगरा मानते हैं जिस का नामान्तर वे कृष्णपुर देते हैं जिस से करिसोबोरा बना होगा। विल्किन्स साहब कहते हैं कि इस नगर को अब मुसल्मान मुगुनगर और हिन्दू कलिसपुर कहते हैं।

* यीस का एक भूगोलवेत्ता।

† यह नदी कैलास के उत्तर से निकलती है।

‡ चन्द्रभागा या अकेसिनेस, आधुनिक चेनाव।

बड़ा द्वीप बनता है जो प्रसिएन (Prasiane) * कहलाता है और एक छोटा बनता है जिस का नाम पटेल (Patale) है। यह कम से कम १२४० मील तक जलयात्रा करने योग्य है। इस की धारा पश्चिम की ओर घूम जाती है, मानों सूर्य के पथ का अनुसरण करती हो और तब समुद्र में गिरती है। गङ्गा के मुख से लेकर इस नदी तक समुद्र के कूल की लम्बाई साधारणत: जो दिया जाता है वही मैं दूंगा यद्यपि सब का विचार मिलता नहीं है। गङ्गा के मुख से केप कलिङ्गन † और डन्डगुल नगर तक ६२५ मील है। ट्रोपिना तक १२२५ ‡ मील। केप पेरिमुला § तक ७५० मील। यहां वाणिज्य का भारतवर्ष में सब से बड़ा स्थान है। उक्त द्वीप पाटल के नगर तक ६२० मील।

---

* यूल साहब कहते हैं कि रोहरी के ऊपर से हैदराबाद तक जिस भूमिखण्ड को नर घेरती है वह सिन्धु नदी के डेल्टा के साथ इस द्वीप का स्थान होगा।

† यूल साहब केप कलिङ्गन को पोआइन्ट गोदावरी मानते हैं। कोरिङ्गन केप में कोरिङ्ग एक विख्यात बन्दर था। निश्चय यहां उसी से तात्पर्य है। डन्डगुल सम्भवत: दन्तपुर है जो कोरिङ्ग से तीस मील की दूरी पर है और बुद्ध का दन्त प्रतिष्ठित हुआ था।

‡ गङ्गा के मुख से।

§ पेरिमुला द्वीप जिसे अब सलसेट (Salsitte) का द्वीप कहते हैं उसी का यह एक केप है।

सिन्धु नदी और योमानिस के बीच में पहाड़ी जातियां ये हैं:—केसी, केट्रीबोनी जो जङ्गलों में रहती हैं, मिगेली (Megallæ) जिस का राजा पांच सौ हाथी तथा अज्ञात पदाति एवम् अश्वबल का स्वामी है, क्राइसी (Chrysei), परसङ्गी (Parasangæ) और असङ्गी (Asangæ) जहां रक्तपियासु व्याघ्र बहुत होते हैं। शास्त्रसज्जित बल उन को तीस सहस्र पदाति, तीन सौ हस्ति और आठ सौ घोड़े का है। ये सिन्धु नदी से बन्द हैं और ६२५ मील के पर्वतों तथा रेगिस्तानों के हस्त से घिरे हैं *। रेगिस्तानों से नीचे डरी (Dari) और सुरी (Suræ) † रहते हैं। १८७ मील तक फिर रेगिस्तान है जो उपजाऊ भूमियों को घेरे हुए हैं जिस प्रकार समुद्र द्वीपों को घेरे रहता है। इन रेगिस्तानों से नीचे माल्टी कोरी (Maltecoræ), सिंघी (Singhæ), मरोही (Marohæ),

---

* ये जातियां यमुना के किनारे से ले कर नर्मदा के मुख तक फैली थीं। सम्भवत: केसी खोशा या खासिया जाति है। यह जाति गुजरात और यमुना के बीच में पर्यटन करती रहती है। केट्रीबोनी के त्रिवर्गी और चेलवेगीय से निकली है। यह खत्री (खत्री) जाति की एक उपशाखा होगी। मिगेली संस्कृतग्रन्थों के मवेल हो सकते हैं जो यमुना के पश्चिम बसे थे। क्राइसी को पुराण का करोष्ठ (विष्णुपुराण) मान सकते हैं। ये तथा परसङ्गी और असङ्गी रान के उत्तर और सिन्धु तथा अरावली के बीच में रहते होंगे।

† सुरी संस्कृत के शूर आधुनिक और जो सिन्धनदी के निकट हैं। हरिवंश के सौरभीर येही हैं।

रसङ्गी (Rarungi) और मोरुनी (Moruni) रहते हैं *। ये उन पर्वतों पर निवास करते हैं जो पश्चिम श्रेणी से समुद्र के कूल से समतल चले गये हैं। ये स्वतन्त्र हैं और इन्हें कोई राजा नहीं है। पर्वत की चोटियों पर ये रहते हैं जिन पर कई नगर इन्हों ने बसा लिये हैं। इन के बाद नरेई (Nareæ) हैं जो भारतवर्ष के सब से ऊंचे पर्वत कैपिटेलिया † (Capatalia) से घिरे हुए हैं। पर्वत के उस पार के निवासी सोना तथा चांदी के बड़ी २ खानों में काम करते हैं। अनन्तर ओरेटुरी ‡ (Oraturæ) हैं जिन के राजा को केवल दश हाथियां हैं किन्तु जिसे पदातिबल अधिक है। फिर उस के बाद वरेतती (Vure tatæ) हैं, जिन का राजा एक भी हाथी नहीं रखता केवल अश्वारोही और पदाति सेना पर भरोसा करता है। तब उदुम्बोरी (Odombææ)

---

* अनुमान है कि ये जातियां कच्छ में रहती थीं। सिंघी अमरकोट के आधुनिक सांघी हैं जो सिंघार जाति के राजपूतों के वंशज हैं। मरोही सम्भवतः वाराहसंहिता के मरुहा हैं। रसङ्गी रोंघी या रङ्ग्हन के पूर्वज होंगे जो दिल्ली के सतलेज के किनारे मिलते हैं।

† कैपिटोलिया निश्चय पवित्र अर्बुदा या आबू पर्वत है जो ६५०० फूट ऊंचा है।

‡ यह राठौर के लिये आया। ये अजमेर को अपना प्राचीन निवासस्थान मानते हैं।

सलवस्त्री (Salabastræ) तथा होरेटी (Horatæ) हैं।* होरेटी को एक सुन्दर नगर है। यह दलदल से सुरक्षित है जो गढ़े का काम करता है। इस में मगर रखे जाते हैं जिन्हें मानव-मांस की बड़ी रुचि है, जिस से पुल के अतिरिक्त दूसरी राह से मनुष्य नगर में पहुंच ही नहीं सकता। उन के और एक नगर की बड़ी प्रशंसा होती है। औटोमेला (Automela) पांच नदियों के सङ्गम पर स्थित है और वाणिज्य का प्रधान स्थान है। इस का राजा सोलह सहस्र हाथियां, डेढ़ लक्ष पदाति और पांच सहस्र अश्वारोही सेना का स्वामी है। उस से छोटा राजा चर्मा (Carmæ) का है जिसे केवल साठ हाथियां हैं और अन्यबल भी थोड़े हैं। उस के बाद पण्डी (Pandæ) हैं। भारत में यही एक देश है जहां स्त्रियां राज्य करती हैं। लोग कहते हैं हर्क्युलीज़ (Hercules) की एक ही कन्या थी जिसे वह बहुत प्यार करता था। उस ने उसे एक बड़े राज्य पर प्रतिष्ठित किया। उस के वंशज तीन सौ नगरों पर राज्य करते हैं और डेढ़ लाख पदाति तथा पांच सौ हस्तियों पर अधिकार रखते हैं। फिर निम्न जातियां हैं, जिन्हें तीन सौ नगर हैं।

---

* पाणिनि लिखते हैं कि उदुम्बरों के देश में सल्व (Salva) रहते थे जो सम्भवत: प्लिनी के सलवस्त्री हैं। यह प्रान्त कच्छ में था [लैसेन साहब कहते हैं कि सलवस्त्री, जोधपुर और सरस्वती के मुख के बीच में बसे थे। और होरेटी खम्भात (Khambhat) की खाड़ी पर। खम्भात के निकट वे औटोमेला का स्थान बताते हैं।] भूल से सोरठ के लिये होरेटी लिखा गया है। सोरठ सौराष्ट्र से निकला है। ये गुजरात में रहते थे। सेन्टमार्टिन साहब का अनुमान है कि औटोमेला प्रसिद्ध वल्लभी होगा।

सिराइनी (Syrieni), डेरङ्गी (Derangæ), पोसिङ्गी (Posingæ), बुज़ी (Buzæ), गोगियेराइ (Gogiarei), अम्ब्री (Umbræ), नेरेई (Nereæ), ब्रेङ्कोसी (Brancosi), नोबुन्दी (Nobundæ), कोकोण्डी (cocondæ), नेसाइ (Nesei), पेडेट्राइरी (Pedatriræ), सोलोब्रियेसी (Solobriasæ) और ओलोस्ट्री (Olostræ) हैं, जो पटेलद्वीप के निकट रहते हैं *। इस द्वीप की उस ओर से कैस्पियन के फाटकों तक १८२५ मील है †।

---

* चर्मी चर्म मण्डल के रहने वाले माने जाते हैं। यह जिला पश्चिम देश में है। महाभारत और विष्णुपुराण में यह चर्मखण्ड लिखा गया है। ये बुन्देलखण्ड तथा गङ्गा के तटवर्त्ती देशों के आधुनिक चर्मार या चमार हैं। पन्डी जो उन के पड़ोसी थे चम्बल नदी के निकट रहते होंगे। इस नदी को संस्कृत में चर्मावती कहते हैं। ये पाण्डु के वंशज थे। इन के बाद जो नामावली जातियों की दी गयी है वे सिन्धु नदी और अर्वली पर्वत के मध्य संकुल प्रदेश में रहते थे। सिराइनी सूरियानी थे जो सिन्धु नदी के निकट बक्कर के समीप में रहते थे। डरङ्गी झाडेजा नामक राजपूत हैं जो आज कल कच्छ में रहते हैं। बुज़ी झाडेजा की प्राचीन शाखा बुडा हैं। गोगियेराइ घारा या लोअर सतलज के तटवर्त्ती कोकरी हैं। अम्ब्री उम्बनी हैं और नेराई सम्भवत: बलूचिस्तान के न्हरोनी हैं। सिन्ध के मुबोटेह नोबुन्दी होंगे और कोकोन्डी निश्चय महाभारत के कोकनद हैं।

† इस नाम के दो राह थे, एक अल्बेनिया में और दूसरी जिस के विषय में प्लिनी कहता है, पश्चिमोत्तर एशिया को पूर्वोत्तर फारस से मिलाती है।

इन के बाद सिन्धु नदी की ओर क्रम से निम्न जातियां हैं, जिन्हें जान लेना सहज है। अमटी (Amatæ), बोलिङ्गी (Bolingæ), गैलीटेलुटी (Gallitalutæ), डिमुरी (Dimuræ), मेगरी (Megari), औडेंबी (Ordabæ) और मेसी (Masæ)* अनन्तर उरी (Uri) और सिलेनि (Sileni)। बाद ही इन के २५० मील तक बालुकामय भूमि विस्तृत है। इन के आगे और्गनगी (Organagæ) अबऔर्टी (Abaortæ), सिबेरी (Siburæ), सुअर्टी (Suertæ), हैं और पुन: इन के सम्मुख पूर्ववत् विस्तृत रेगिस्तान मिलता है। तब सरोफिजीस, (Sarophages), सोर्गी (Sorgæ), बराओमेटी (Baraomatæ) और अम्ब्रिट्टी (Ambritæ) हैं जिन की बारह जातियां हैं। उन में प्रत्येक को दो नगर हैं और असेनि (Aseni) को तीन †। उन की राजधानी बुकैफेला है। यह उसी स्थान पर बसा है जहां उस नाम वाला सिकन्दर का विख्यात घोड़ा गाड़ा गया

---

* पाणिनि ने लिखा है कि भौलिङ्गी देश में शाल्व रहते थे। इसी से मार्टिन साहब ने बोलिङ्गी जाति को अर्बली पर्वत की पश्चिमीय तराई में रक्खा है। वे गैलिटेलुटी को गहलत या गहलोत मानते हैं। डिमुटी को डुमरा, मेगरी को मोकर (सिन्ध के आधुनिक मेहर और पूर्व बलुचिस्तान के मेघारी) मेसी को मज़ारी (जो सिन्ध के पश्चिम किनारे शिकारपुर और मीतन कोट के बीच में रहते हैं) यूरी को हौए (राजपूत वंशावली के हौरिया और सिलेनी को सुलल बताते हैं।

† ये जातियां सिन्धु नदी और पञ्जाब की नदियों के सङ्गम से ऊपर रहती होंगी। इन का नाम भली भांति निश्चित नहीं

था *। तदनन्तर सोलियडी (Soleadæ) और सोन्द्री (Sondri) नाम की पहाड़ी जातियां हैं जो काकेशस पर्वत की जड़ में निवास करती हैं। और यदि हम लोग सिन्धुनदी के उस पार जा कर इस के धाराप्रवाह के साथ चलें तो हम लोगों को समरब्राइ (Samarabriæ), संब्रुकेनी (Sambruceni), बिसम्ब्राइटी (Bisambritae), ओसिआइ (Osii), अन्टिजेनी (Antixeni) और तक्सिली (Taxillae) मिलेंगे। तक्सिली की एक विख्यात नगर है †। इस के उपरान्त अमन्द (Amanda) नाम की

किया जा सकता। सिबैरी तो महाभारत के सौबीर हैं। सम्भवतः अबस्टैनी और सरोफिजिस अफ़गानिस्तान के अफरीदी और सरभान (सरबनी) हैं। वे अखिन्द्री और असिनी नदी के पूर्व रहते थे। सिकन्दर के इतिहासलेखकों का अम्बस्टी (Ambastae) संस्कृत के अम्बष्ठ) और अम्बष्टी एक ही हो सकते हैं। ये अकेसिनीस के निकट रहते थे।

* बुकेफेला सिकन्दर का घोड़ा था। सिकन्दर ने उसी के नाम से एक नगर बसाया। प्लुटार्क और प्लिनी का मत है कि यह नगर हिडैस्पस नदी के बायें तट पर बसा था, किन्तु स्ट्रैबो और एरियन दक्षिण तट पर कहते हैं। एरियन के अनुसार यह शिविर के स्थान पर बना था, किन्तु स्ट्रैबो मानता है कि जिस स्थान से वह नदी के पार हुआ वहां इस की नीव पड़ी।

† इन जातियों का कुछ पता नहीं चलता। केवल तक्सिला नगर ज्ञात है। प्लिनी कहता है कि यह सिन्धुनदी से दो मंजिल है, किन्तु चीनी यात्री कहते हैं कि यह तीन मंजिल है। तीन ही मंजिल अर्थात् ७४ मील पर इस के खण्डहर स्तूप मन्दिर और मठों से भरा मिलता है।

समतल भूमि मिलती है जिस में चार जातियां रहती हैं। प्युकीलैटी (Peucolaitae) अर्सगलिटी (Arsagalitae), गैरेटी (geretae) और असोई (Asoi) *।

कई लेखक सिन्धुनदी को भारतवर्ष की सीमा नहीं मानते, किन्तु इस में जेड्रोसाई (gedrosi), अरकोटी (Arachotæ), अराइ (Arii) परोपेमीसेडी (Paropamisadæ) नाम की चार सत्रपी भी जोड़ते हैं † और कोफीस (Cophes) नदी को इस की सीमा मानते हैं, यद्यपि दूसरे इन सभों को एराइ के अन्तर्गत समझते हैं।

बहुत से लेखक भारतवर्ष में नाइसा नगर और मेरस पर्वत को भी जोड़ते हैं, जो पिता बैकस के कारण पवित्र है और जहां

---

*असन्द नाम कहीं नहीं मिलता। मार्टिन साहब कहते हैं कि यह गान्धार देश है, क्योंकि गान्धार का भी वही स्थान है जहां यह बताया जाता है। अन्य लेखकों से ज्ञात होता है कि प्युकोलाइटी गान्धार ही देश में रहते थे। गैरेटी एरियन के गौरियाइ हैं। असोइ अश्वकाइ (Aspsii) हो सकते हैं, जिसे स्ट्रैबो हिप्पसाइ या पसाइ कहता है। अर्सगलिटी का नाम केवल प्लिनी लेता है। सम्भवत: यह दो जातियों का नाम है। एक अर्स जिस का वर्णन टॉलेमी करता है और दूसरा घिलित या गिलघिट जो संस्कृत का गह्वलत है।

† सम्भवत: जेड्रोसिया का विस्तार उतना ही था जितना आधुनिक मेकरान का है। आर्कोसिया सुलेमान पर्वत से जेड्रोसिया तक फैला था। इस की राजधानी आर्कोटिस कान्धार के निकट था। आरिया मेरोद और हेरात के बीच का देश सूचित करता है।

से यह कथा निकली कि वह जुपिटर की जांघ से उत्पन्न हुआ। वे ऐस्टेकैनी (Astacany) * को भी इस में मिलाते हैं जिस के देश में अङ्गूर अधिक होता है और लरेल, बक्सवृक्ष तथा सभी प्रकार के फल जो ग्रीस में मिलते हैं वहां पाये जाते हैं। इस देश की उर्वरता, फल और वृक्षों की प्रकृति, पशु, पक्षी तथा अन्य जन्तुओं के विषय में जो असाधारण और अत्यन्त आश्चर्यजनक वृत्तान्त प्रचलित है वह यथास्थान पुस्तक के अन्य भागों में लिखा जायगा। कुछ आगे में सभयों के सम्बन्ध में कहूंगा, किन्तु तप्रोबेन द्वीप के विषय में यही कहना उचित समझता हूं। किन्तु इस द्वीप के पूर्व अन्य द्वीप हैं। एक पेटल है जो सिन्धु नदी के मुख पर है। इस का आकार त्रिकोण है और यह २२० मील चौड़ा है। सिन्धु नदी के मुख से आगे क्राइसी (chryse) और आर्गायर (Argyre †) है, जहां मुझे विश्वास है कि धातु अधिक होता है। मैं सहज ही नहीं विश्वास कर सकता कि वहां की भूमि स्वर्ण तथा रजतमय है जैसा कि कुछ लेखक कहते हैं। इन से बीस मील दूर क्रोकल (crocala) ‡ है जहां से बारह मील की दूरी पर बिबग (Bibaga) है। यहां कंकड़ा और घोंघा बहुत होता है। यहां से नव मील के उपरान्त तोरलिब (Torralliba) है। इन के अतिरिक्त अनेक द्वीप हैं जो उल्लेख के अयोग्य हैं।

---

* अश्वक से निकला है। ग्रीस के लेखकों ने असकन (Assakan लिखा है। यह गान्धार देश का दूसरा नाम है।

† यूल साहब के अनुसार क्राइसी वर्मा है और आर्गायर अराकन प्रदेश है।

‡ क्रोकल कराची की खाड़ी में था।

पत्रखण्ड ५६ (ख)

सोलिनस।

भारतवर्ष की जातियों की सूची।

भारतवर्ष की सब से बड़ी नदियां गङ्गा और सिन्धु हैं। इन के विषय में कुछ लोग कहते हैं कि गङ्गा अज्ञात स्थान से निकलती है और नाइल के ऐसा जिन देशों द्वारा होकर बहती है उन्हें जलमग्न करती है। किन्तु दूसरे यह समझते हैं कि यह स्कादिया के पर्वतों से निकलती है। [हिपैनिस भी वहां है। यह बड़ी नदी है। सिकन्दर की यात्रा की सीमा है, जैसा कि इस के किनारे निर्मित स्तूप सिद्ध करते हैं।] गङ्गा की चौड़ाई कम से कम आठ मील है और अधिक से अधिक बीस। जहां जल बहुत कम है वहां इस की गहराई सौ फूट है। जो अति दूरान्तिक प्रदेश में रहते हैं उस का नाम गङ्गारि देस (Gangaridæ) है। इस के राजा को सहस्र घोड़े, सात सौ हस्ति और साठ सहस्र पदाति युद्ध के लिये प्रस्तुत रहते हैं।

भारतवासियों में कुछ भूमि जोतते हैं, बहुत अधिक लोग युद्ध का व्यवसाय करते हैं और अन्य लोग वाणिज्य करते हैं। सब से अधिक धनी और मानी राज्यकार्य चलाते, विचार करते और राजा के साथ सभा में बैठते हैं। उन में एक पांचवीं श्रेणी है, जो बुद्धि के लिये बड़े विख्यात मनुष्यों से गठित है। जिन्हें जो भी सर जाने पर ये जलते हुए चिता पर आरोहण करके मृत्यु को आलिङ्गन करते हैं। किन्तु जो अधिक कठोर सम्प्रदाय का अनुसरण करते हैं वे जङ्गलों में अपना जीवन व्यतीत करते हैं और हाथियों को बझाते हैं। जब ये पोसुए और सीधे हो

जाते हैं तब उन्हें हल जोतने और चढ़ने के व्यवहार में लाते हैं।

गङ्गा में एक द्वीप है जो अत्यन्त जनाकीर्ण है। यह बड़ी प्रबल जाति के अधिकार में है। इस का राजा शस्त्रधारी पचास सहस्र पदाति, चार सहस्र अश्वारोही रखता है। वस्तुतः कोई मनुष्य राजपद पर प्रतिष्ठित ऐसी सेना नहीं रखता जिस में हास्ति पदाति और अश्वारोही अधिक नहीं हों।

प्रशियन जाति अत्यन्त शक्तिशाली है। यह पालीबोथ्रा नगर में रहती है; इसी से कोई २ इसे पालीबोथ्री भी कहते हैं। इस का राजा सदा वेतन देकर ६०००० पदाति, ३०००० अश्वारोही और ८००० हस्तिबल रखते हैं।

पालीबोथ्रा के आगे मेलियस पर्वत है, जिस पर क्रम से छः महीने जाड़े में छाया उत्तर को ओर पड़ती है और गरमी में दक्षिण को ओर। इस देश में सप्तर्षि मण्डल वर्ष में एक ही बार दृष्टिगोचर होता है, सो भी केवल पन्द्रह दिनों तक जैसा कि बीठन सूचित करता है। वह कहता है कि ऐसा भारतवर्ष के अनेक प्रान्तों में होता है। जो लोग सिन्धु नदी के निकट उन प्रदेशों में रहते हैं जो दक्षिण की ओर हैं वे अन्य जातियों की अपेक्षा गरमी से अधिक विवर्ण होते हैं। सूर्य के प्रबल आतप का वहां के निवासियों के वर्ण पर प्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ता है। पर्वतों में पिग्मी रहते हैं।

समुद्रतटवासियों में कोई राजा नहीं है। पैन्डियन जाति में स्त्रियां राज्य करती हैं। कहा जाता है उन की प्रथम रानी हर्क्युलीज़ की पुत्री थी। प्रचलित मत यही है कि नाइसा (Nysa) नगर और मीरस (Meros) पर्वत इसी देश में हैं। यह

पर्वत जुपिटर के कारण पवित्र समझा जाता है। भारतवासी कहते हैं कि इस के ऊपर एक गुफा में पिता बेकस पले थे। इसी नाम से यह अद्भुत कथा निकली है कि बेकस अपने पिता की जांघ से उत्पन्न हुआ था। सिन्धु नदी के मुख के आगे दो द्वीप हैं क्राईसा और आर्गीयर जिन में से इतने अधिक धातु निकलते हैं कि अनेक लेखक इस की भूमि को स्वर्ण तथा रजत-मय बताते हैं।

सप्त पञ्चाशत पत्रखण्ड।

डायोनिसस के विषय में।

भारतवासियों पर आक्रमण करने के समय डायोनिसस ने अपने अनुयायियों के अस्त्रों को जिन से वे सज्जित थे छिपा दिया जिस में नगर में सब इच्छापूर्वक उन्हें ग्रहण करें। उस ने उन को कोमल वस्त्र और मृगचर्म पहनाया। बर्छे द्राक्षपत्रों से आच्छादित किये गये और थर्सस * की नोक सूक्ष्म थी। वह युद्ध करने का इङ्गित सिंघा के बदले झांझ और ढोल से देता था और शत्रु को मद्यद्वारा विह्वल कर के उन का ध्यान युद्ध से हटा कर नृत्य में लगा देता था। यह तथा अन्य बेकस सम्बन्धी ताण्डव युद्ध में प्रयुक्त होते थे जिस में उस ने भारतवर्ष तथा समस्त एशिया को हस्तगत कर लिया।

भारतवर्ष की चढ़ाई में यह देख कर कि उस की सेना वायु की प्रचण्ड गर्मी नहीं सह सकती है डायोनिसस ने भारतवर्ष के तीन चोटीवाले पर्वत को बलपूर्वक अधिकृत किया। इन चोटियों में एक का नाम कोरेसिबाई (Coresibie)

---

* थर्सस—द्राक्षपत्रों से आच्छादित एक प्रकार की छड़ी।

है। दूसरा कौनडस्को (Kondaske) कहलाता है और दूसरे का नाम मीरस अपने जन्म का स्मारक उस ने रक्खा है। उस पर अनेक झरने थे जिन का जल पीने में मीठा था। आखेट योग्य अनेक जन्तु और वृक्षों के फल अत्यधिक थे। वहां था जिस से शरीर में नयी शक्ति का सञ्चार हुआ। वहां जो ओड़ा रक्खे गये थे वे मैदान के असभ्य जातियों पर अकस्मात् आ पड़े। उन को इन्हों ने सहज ही में छितर बितर कर दिया क्योंकि पर्वत के ऊपर अनुकूल स्थान से उन पर शस्त्रोंद्वारा आक्रमण किया था।

[भारतवासियों को जीत कर डायोनिसस ने भारतवासियों तथा अमेज़न (Amazons) लोगों को सहायक स्वरूप से ले कर बेक्ट्रिया पर आक्रमण किया। उस देश की सीमा सारङ्गिस नदी है। बेक्ट्रियन लोगों ने उस पर्वत को हस्तगत किया जो नदी पर झुका हुआ था जिस में पार होने के समय डायोनिसस पर अनुकूल स्थान से आक्रमण करें। किन्तु उस ने नदी के किनारे उतर कर के अमेज़न और बकवई को पार जाने का आदेश किया जिस से बेक्ट्रिया के लोग स्त्रियों को तुच्छ समझ कर पर्वत पर से नीचे आ जायं। तब स्त्रियां पार होने का प्रयत्न करने लगीं जिस से शत्रु पर्वत के नीचे चले आये और नदी तक बढ़ कर उन्हें भगाने का उपाय करने लगे। तब डायोनिसस अपने मनुष्यों के साथ उन की रक्षा के लिये आ कर बेक्ट्रियन लोगों को मार डाला, जो स्त्रियों से युद्ध करने में प्रतिरुद्ध थे और इस प्रकार सकुशल नदी पार हो गया।

अष्ट पञ्चाशत पत्रखण्ड।

हर्क्युलीज़ और पैण्ड्या के विषय में हेरैक्लीज़ को भारतवर्ष में एक कन्या हुई जिस का उस ने पैण्ड्या नाम रखा। उस को उस ने भारतवर्ष का वह भाग दिया जो दक्षिण की ओर समुद्र तक विस्तृत है। उस की प्रजाओं को उस ने तीन सौ पैंसठ ग्रामों में विभक्त कर दिया और यह आज्ञा दिया कि प्रत्येक ग्राम प्रत्येक दिन राजकोष में राजकीय कर ले आवे जिस में रानी को उन मनुष्यों की सहायता सदा मिलती रहे जिन की बारी कर देने की हो जिस से वह कर नहीं देनेवालों पर बल प्रयोग कर सके।

एकोनषष्ठि पत्रखण्ड

भारतवर्ष के जन्तुओं के विषय में

ईलियन।

(२) मुझे ज्ञात हुआ है कि भारतवर्ष में सुग्गे होते हैं और यद्यपि मैं उन का नाम पहले ले चुका हूं तथापि जो मैं ने उस समय नहीं कहा था वह यहां लिख देना उपयुक्त होगा। मैं ने सुना है कि उस की तीन जातियां होती हैं और इन सभी को बालकों के ऐसा यदि बोलने सिखाया जाय तो ये बालकों के समान अधिक बोलने वाले हो जाते हैं और मनुष्य के स्वर से बोलने लगते हैं। किन्तु जङ्गलों में ये पक्षियों के ऐसा चिल्लाते हैं न कोई सुरीला स्पष्ट बोली ही बोलते हैं और न जङ्गली होने के कारण अशिक्षित बात ही करते हैं। भारतवर्ष में मयूर भी होते हैं जिन का आकार सब देशों के मयूरों से बड़ा होता है। वहां ईषत हरित कबूतर भी पाये जाते हैं। जो मनुष्य पक्षियों से पूर्णरूप से अभिज्ञ नहीं हैं

वे इन्हें पहले पहल देख कर कबूतर नहीं किन्तु मुर्गा समझेंगी। ठोढ और चरण में वे रोम के तीतर के समान होते हैं। वहां असाधारण आकार के कुक्कुट होते हैं जिन की चोटी अन्यदेशों के समान कम से कम हमारे देश के समान लाल नहीं होता किन्तु पुष्पकिरीट के ऐसा विचित्र रङ्गों का होता है। उन की पूंछ के पर न टेढ़े होते हैं और न गोल किन्तु उन की चौड़ाई अधिक होती है और जिस प्रकार मयूर अपनी पूंछ भूमि में बहारते हैं उसी प्रकार वे भी करते हैं, अब वे उन्हें सीधा या खड़ा नहीं करते। इन भारतीय कुक्कुटों का पर सोने के वर्ण का होता है और मरकत की नाईं गहरा नीला भी होता है।

(३) भारतवर्ष में एक और पक्षी पायी जाती है। यह पक्षी आकार में भरतपक्षि के बराबर होती है और रङ्ग इस का विचित्र होता है। इसे मनुष्य के समान शब्द उच्चारण करने की शिक्षा दी जाती है। यह मुर्गे से भी अधिक वाक्पटु और स्वभावतः अधिक चतुर होती है। यह मनुष्य द्वारा भोजन प्राप्त करने में सुख नहीं अनुभव करती किन्तु स्वतंत्रता के लिये इतना व्याकुल और अपने साथियों की सङ्गति में स्वच्छन्द गीत गाने के लिये इतना आतुर रहती है कि उत्तम भोजन के साथ दासत्व की अपेक्षा भूखे रहना ही पसन्द करता है। भारतवर्ष में फिलिप के पुत्र सिकन्दर द्वारा निर्मित बुकेफिला तथा इस के समीपवर्ती कुरोपोलिस एवम् अन्यान्य नगरों में बसे हुए मैकिडोनियम इसे करकियाम कहते हैं। मेरा विश्वास है कि इस नाम की उत्पत्ति इस बात से हुई कि यह पक्षि उसी प्रकार पूंछ हिलाती है जैसे जलकौर।

(४) यह भी मुझे ज्ञात हुआ है कि भारतवर्ष में केलस नाम की एक पक्षी होती है जो बस्टर्ड (bustard = बड़ा पिर्० वा

कागज़ाद़) से तीन गुना बड़ा होता है। इस की चोंच बहुत् और पैर लम्बे होते हैं। चमड़ा के थैले के समान इसे विशाल झोंझ होता है। इस का रव बड़ा कर्कश होता है। पर इस के खाकी रंग के होते हैं; केवल किनारे पर फीका पीलापन रहता है।

(५) मैं सुनता हूं कि भारतवर्षीय हुपू (Hoopoe) यहां के हुपू से दुगुना बड़े हैं और देखने में भी अधिक सुन्दर होते हैं। होमर कहता है कि जैसे यवन नरपतिगण घोड़े के लगाम और साज के विलासी हैं उसी प्रकार भारतीय नरेशों का हुपू प्रिय खिलौना है। ये इसे हाथ पर लिये फिरते हैं, इस से खेल करते हैं और प्रकृति ने जिस अपार शोभा से इसे भूषित किया है उस में मुग्ध हो कर देखते रहने में कभी नहीं थकते। ब्राह्मणों ने इस पक्षि विशेष के विषय में भी एक कथा बना डाली है। कथा यों है—भारतनिवासियों के राजा को एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उस बालक के बड़े भाई भी थे। सयाने होने पर वे बड़े अन्यायशील और दुष्ट निकले। वे अपने भाई से घृणा करते थे क्योंकि वह सब से छोटा था और अपने पिता माता का भी निरादर करते थे क्योंकि उन्हें बहुत बूढ़ा समझ कर उन से घृणा करते थे। अतः वह बालक और उस के माता पिता उन दुष्टों के साथ में नहीं सके और अन्त में तीनों घर छोड़ कर भाग चले। उन लोगों को जो लम्बा सफर करनी पड़ा इस से दोनों वयोगत जन मार्गश्रम से मरणापन्न हो गये। बालक ने उन का यथेष्ट सम्मान किया और खड्गद्वारा अपना शिरश्छेदन कर अपने शरीर ही में उन की समाधि बनायी। ब्राह्मण लोग कहते हैं कि तब सर्वद्रष्टा सूर्य ने इस असाधारण पितृभक्ति से आश्चर्ययुक्त और प्रसन्न होकर उस बालक को एक पक्षी बना दिया जो देखने में बहुत ही सुन्दर होता है और

बहुत दिनों तक जीता है। उस के सिर पर लाल चोटी निकल आयी मानो भागने पर उस ने जो कार्य किया था उस का यह स्मारक हो। एथेनसनिवासी चोटी वाली लावा के विषय में ठीक ऐसी ही आश्चर्यजनक कथा कहते हैं। हास्यरसिक कवि अरिस्टोफिनीज़ इसी कथा का अनुसरण करता जब वह 'पक्षी' नामक पुस्तक में लिखता है—"क्योंकि तू ज्ञानहीन था, सदा हल्ला नहीं किया करता था और न ईसप ही की किताब सदा उलटता रहता था जिस ने चोटी वाली लावा के विषय में कहा है कि यह पक्षियों में यह सब से प्रथम है, पृथ्वी की सृष्टि से भी पूर्व इस का जन्म हुआ। अनन्तर जब उस का पिता कफ होकर मर गया तब पृथ्वी वर्तमान नहीं रहने के कारण वह गाड़ा नहीं जासका। पांच दिनों तक वह ऐसे ही पड़ा रहा। इस की पुत्री को कहीं समाधिस्थल नहीं मिला, तब उस ने अपना सिर खोद उसी में उसे गाड़ दिया।" इस से अधिक सम्भावना है कि यह कथा यद्यपि भिन्न २ की विषय में कही गयी है तथापि यह भारतवासियों ही से निकल कर यवनों तक फैली है। क्योंकि ब्राह्मण लोग कहते हैं कि जब से हपूने, जो उस समय बालक तथा मानवभेष में था, ऐसा पितृभक्ति का कार्य किया तब से आज तक दीर्घ काल व्यतीत हो गया।

(६) भारतवर्ष में एक पशु होता है जो देखने में ठीक स्थलघड़ियाल के समान और ऊंचाई में माल्टा के कुत्ते के बराबर होता है। समस्त शरीर इस का चोंइटे से ढका रहता है जो इतना रुखड़ा और भरा रहता है कि चमड़ा छुड़ाने पर भारतवासी इस से आरा का काम लेते हैं। यह पीतल काट देता है और लोहे को भी छेद देता है। वे इसे फट्टग कहते हैं।

(८) भारत समुद्र में जल-सर्प होते हैं जिन की पूंछ चौड़ी होती है। स्थलों में बहुत विष वाले सर्प होते हैं। किन्तु ये जलसर्प उतने विषैले नहीं होते जितना तीक्ष्ण इन का दंशन होता है।

(९) भारतवर्ष में जङ्गली घोड़े तथा गधे झुण्ड के झुण्ड होते हैं। लोग कहते हैं कि घोड़ियां गधों से आनन्दपूर्वक सङ्गम करती हैं और खच्चर उत्पन्न करती हैं जो स्वाभाविक, और तीव्रगामिनी होते हैं किन्तु वे बन्धन नहीं पसन्द करते और उद्दण्डी होते हैं। कहा जाता है कि वे खच्चर जाल से पकड़े जाते हैं और [illegible] पकड़ लेते हैं और तब लोग इसे प्रसि-अन जाति के राजा के निकट ले जाते हैं। दो वर्ष तक का होने पर ये दौड़ सकते हैं किन्तु उस के बाद पकड़े जाने पर ये [illegible] अन्य जन्तुओं से किसी प्रकार भिन्न नहीं जान पड़ते।

(यहां पर खण्ड द्वादश छोड़ दिया हुआ है)

(११) भारतवर्ष में आकाशचारी एक जन्तु होता है जो आकार में घोड़े से दुगुना बड़ा होता है। इस की पूंछ में एक गुच्छ काला घना बाल होता है। यह बाल मनुष्य के बाल से अधिक सुन्दर होता है। स्त्रियां इसे बहुत पसन्द करती हैं। क्योंकि इस के साथ अपनी स्वाभाविक लटों को गूंथ कर वे बहुत मनोहर जूड़ा बनाती हैं। इस के बाल दो हाथ लम्बे होते हैं और एकही जड़ से झालर के ऐसा तीस तीस निकलते हैं। यह पशु स्वयम् अत्यन्त डरपोक होता है, अपनी ओर किसी की दृष्टि देख कर यह पूर्ण वेग से सीधे भाग चलता है। पर इस की गति से इस के भागने की उत्कण्ठा अधिक बलवती होती

है। तेज घोड़े तथा कुत्तों से इस का शिकार किया जाता है। जब यह देखता है कि अब यह पकड़ा जायगा तब यह अपनी पूंछ किसी निकटवर्त्ती झाड़ी में छिपा देता है और स्वयम् पीछा करने वालों की ओर मुंह फेर कर सावधानी से उन को देखने लगता है। एक प्रकार से यह साहस भी करता है और सोचता है कि इस की पूंछ छिपे रहने से आखेटक इसे पकड़ने का विचार छोड़ देंगे क्योंकि यह समझता है कि पूंछ ही इस का चित्ताकर्षक है। पर यह सब उस का भ्रममात्र ठहरता है। कोई इसे विषैले अस्त्र से आहत करता है और तब उस का समूचा चमड़ा कुड़ा लेता है (क्योंकि यह मूल्यवान् होता है) और मृत शरीर को फेंक देता है क्योंकि इस के मांस के किसी अंश को किसी व्यवहार में नहीं लाते।

(१४) और भी, भारत समुद्र में ह्वेल मछलियां पायी जाती हैं जो बड़े २ हाथियों से भी पचगुना बड़ी होती हैं। एक पसली इस वृहत मछली का बीस हाथ के बराबर होता है और इस का होंठ पन्द्रह हाथ का होता है। उस की नाक के निकट जो पर होते हैं वे प्रत्येक सात २ हाथ चौड़े होते हैं। यहां केकेस नामक खोपड़ी वाली मछली होती है, तथा रक्त वर्ण की मछली भी होती है जो गिलन के नपने में अंट जाय एवम् ऐसी भी मछलियां हैं जो गिलन के नपने को ढंक ले। भारतवर्ष में मछलियां बहुत बड़ी २ होती हैं विशेषत: (Sea wolves, Jhunuies, golden eyebrows.) यह भी सुनता हूं कि नदियों के बढ़ने का जब समय आता है तब वे अपने गर्जते हुए प्रवाह से भूमि को डुबा देती हैं। इस से मछलियां खेतों में चली जाती हैं और थोड़े पानी में भी घूमा करती हैं।

नदियों को बढ़ाने वाला वर्षाकाल जब बीत जाता है और जल खेतों से हट कर फिर प्रकृत नालाओं से बहने लगते हैं तब नीची तथा समतलत भूमि में एवम् तरी में जहां कुछ न कुछ जल अवश्य रुक कर रह जाता है आठ आठ हाथ की मछलियां पायी जाती हैं. इन्हें स्वयम् किसान लोग पकड़ते हैं क्योंकि ये जल के ऊपर धीरे २ तैरती फिरती हैं। इन्हें पूरा जल नहीं मिलता कि ये स्वच्छन्द विचर सकें वरन् जल इतना कम रहता है कि बहुत कठिनता से ये उस में प्राण धारण कर सकती हैं।

(१३) निम्न मछलियां भी भारतवर्ष में पायी जाती हैं। (Prickly roaches) जो आर्गलिस के सर्पों से किसी प्रकार छोटी नहीं होतीं, और (shrimps) जो भारतवर्ष में केकड़े से भी बड़ी होती हैं। ये समुद्र से गंगा की धारा द्वारा ऊपर चढ़ जाती हैं। इन का बहुत बड़ा पच्छा होता है जो छूने से रुखड़ा मालूम होता है। मैं ने निश्चय कराया है कि जो (shrimp) फ़ारस की खाड़ी से सिन्ध नदी में चली जाती हैं उन का कांटा चिकना होता है और (feeler) उन का लम्बा और ऐंठा हुआ होता है किन्तु उन्हें पंजा नहीं होता।

(१४) भारतवर्ष में कछुआ पाया जाता है। वहां यह नदियों में रहता है। यह बहुत बड़ा होता है और इस की खोपड़ी बड़ी डेंगी से छोटी नहीं होती जिस में दस मेडिम्नी (१२० गिलन) दाल अंट सके। स्थल कछुए भी होते हैं। जहां इन्न नीचे गड़ जाता है और बहुत सुगमता से चल कर ढेलों की ढेरी लगा देता ऐसी उर्वर भूमि के बड़े २ ढेलों के बराबर यह होता है। कहा जाता है कि ये अपनी खोपड़ी छोड़ते हैं। किसान और खेत में काम करने वाले अपने हथियार से इस

को खोपड़ी छुड़ा लेते हैं जैसे कीड़ा से खाये हुए वृक्ष में से कीड़े को। ये कछुये बहुत मोटे होते हैं, मांस इनका स्वादिष्ट होता है। और समुद्र के कछुए के समान मोखा नहीं होता।

(१५) हमारे यहां भी बुद्धिमान पशु पाये जाते हैं किन्तु यहां वे थोड़े हैं और भारतवर्ष ऐसा अधिक नहीं हैं, वहां हाथी होता है जिसे बुद्धि रहती है। सुग्गा, वनमानुष, बेटर भी पाये जाते हैं। हमें भारतीय चींटियों को भी नहीं भूलना चाहिये जो अपनी बुद्धिमत्ता के लिये इतनी प्रसिद्ध हैं। हमारे देश की भी चींटियां निःसन्देह अपने लिये खोद कर पृथ्वी के नीचे बिल बनाती हैं और छिपने का स्थान ठीक कर लेती हैं तथा एक प्रकार से खान के कामों में अपना बल लगा देती हैं क्योंकि इस में भी वर्णनातीत परिश्रम पड़ता है और छिपा कर काम किया जाता है किन्तु भारतवर्ष की चींटियां छोटे २ मकानों के समूह बनाती हैं जो ढालुए और समतल भूमि पर नहीं होते जहां बाढ़ में वे सहज ही प्लावित हो जाते, पर ऊंचे तथा खड़े पर्वतों पर होते हैं। इन सभी में बड़े चातुर्य से छेद कर वे पेचीला रास्ता बनाती हैं जिस से इजिप्ट निवासियों के समाधिस्तूप तथा क्रीट के भूलभुलैये रखने वाले गड्ढों का स्मरण हो आता है। अपने गड्ढों को वे ऐसा बनाती हैं कि कोई भी रेखा सीधी नहीं होती और किसी चीज का उन में घुस जाना वा बढ़ कर चला जाना कठिन है, छेद और घुमाव इतने टेढ़े हैं। बाहर अपने जाने के लिये तथा अन्न भण्डार में ले जाने के लिये वे एक ही छिद्र रखती हैं। ऊंची जगह पर मकान बनाने का उद्देश्य निश्चय नदियों की बाढ़ से बचना ही है। अपनी दूरदर्शिता से वे यह लाभ उठाती हैं कि जब चारों ओर झील के समान जल

हो जाता है तब वे दुर्ग अथवा द्वीपों के समान अपने घरों में रहते हैं। और भी जिन घरों में वे रहते हैं वे सब निकट रहने पर भी बाढ़ से अलग नहीं हो जाते वरन् और भी दृढ़ हो जाते हैं विशेषत: प्रात: कालीन सीत से। क्योंकि इस सीत के जम जाने से बरफ का एक ढकना ऊपर से पड़ जाता है जो पतला होने पर भी मजबूत होता है इन की जड़ में नदी में बहते हुए घास और लता की छाल लग जाने से ये और भी सुदृढ़ हो जाते हैं। जो कुछ नीअर्कस ने पूर्व में कहा था वही मैंने इन चौकियों के विषय में कहा।

(१६) भारतीय अरिअनौइ (Arianoi) के देश में एक भूगर्भ में गड्ढा है जिस में अज्ञात कमरे, प्रच्छन्न रास्ते और अदृश्य सड़कें हैं। ये बहुत गहरे हैं और बहुत दूर तक फैले हैं। कैसे ये बने, जिस ने इन्हें खोदा भारतवासी कुछ नहीं कहते और मैं ने अनुसन्धान भी नहीं किया। भारतवासी यहां लाख सहस्र से भी अधिक भिन्न २ पशु—भेड़ बकरे, बैल और घोड़े ले आते हैं। प्रत्येक मनुष्य जो बुरे स्वप्न, अथवा भविष्यद्वाणी से भयभीत रहते हैं अथवा जो अशकुनसूचक पक्षियों को देखे रहते हैं वे अपने जीवन के बदले में गढ़े में ऐसे पशु बलि देते हैं जो उन के वित्त के अनुकूल हों जिस में उन को जान का छुटकारा हो। ये बलि के पशु बांध कर अथवा बलात् नहीं जाते वरन स्वेच्छापूर्वक मानों किसी अज्ञात मन्त्र के वश्य हो कर स्वयम् सड़कों से जाते हैं। गढ़े के किनारे पहुंचते ही वे उस में कूद पड़ते हैं और उस अज्ञात अदृश्य गढ़े में गिरते ही मनुष्य की दृष्टि से सदा के लिये लुप्त हो जाते हैं। किन्तु ऊपर बैल का डकरना, घोड़ों का हिनहिनाना, भेड़ों का मिमियाना

तथा बकरों के दुःखपूर्ण शब्द सुने जाते हैं। यदि कोई निकट जा कर कान लगा कर सुने तो यह सब सुना जायगा। यह शब्द कभी बन्द नहीं होता क्योंकि प्रतिदिन मनुष्य अपने बदले में नये २ बलि के लिये पशु ले आते हैं। जो अन्त में पशु आते हैं उन्हीं के शब्द सुने जाते हैं अथवा जो पहले आये थे उन के भी सुने जाते हैं यह मैं कह नहीं सकता—केवल यही मैं जानता हूं कि शब्द सुने जाते हैं।

(१७) जिस समुद्र का ऊपर ज़िक्र आ चुका है उस में लोग कहते हैं कि एक बहुत बड़ा द्वीप है जिस का नाम तप्रोबेन है। जो कुछ मैं ने सुना है उस से यह बहुत बड़ा और पहाड़ी द्वीप * ज्ञात होता है जिस की लम्बाई ७००० स्टेडियम और चौड़ाई ५००० स्टेडियम होगी। इस में कोई नगर नहीं है केवल ग्राम हैं जिन की संख्या ७५० होगी। यहां के निवासी जिन मकानों में रहते हैं वे काठ के बने होते हैं और कोई २ बांस के भी होते हैं।

(१८) द्वीप के चारो ओर जो समुद्र है उस में कछुए इतने बड़े २ होते हैं कि उन को खोपड़ी घरके छत बनाये जाते हैं। एक खोपड़ी १५ हाथ लम्बा होता है। बहुत मनुष्य इस के नीचे तीक्ष्ण धूप से बच कर रह सकते हैं तथा साया का सुख ले सकते हैं। किन्तु इस से भी अधिक यह वर्षा के प्रवाह खपड़ों से भी बढ़ कर रोकता है। जो इस के नीचे आश्रय लेते हैं

---

* प्राचीन ग्रन्थों में इस का आकार प्रायः बहुत बढ़ा कर लिखा गया है। उत्तर से दक्षिण इस की लम्बाई २७१॥ मील और पूर्व से पश्चिम इस की चौड़ाई १३७॥ मील है। घेराव में यह ६५० मील के लगभग है।

के दृष्टिपात का शब्द जैसा छत पर होता है वैसा सुनते हैं किसी हालत में जिन लोगों का खपड़ा फूट जाता है उन के समान उन्हें घर छोड़ना नहीं पड़ता है क्योंकि खोपड़ी कड़ी एवम् खोखले चट्टान अथवा प्रकृत गुफा के छत के समान होती है।

महासमुद्र में जो द्वीप है जिसे लोग तप्रोबेन कहते हैं उस में तालवृक्ष हैं। यहां आश्चर्यजनक नियमपूर्वक एक ही श्रेणी में वृक्ष लगाये जाते हैं जिस प्रकार रम्य फुलवारियों में छांह वाले वृक्ष चुने २ स्थानों में लगाये जाते हैं। यहां हाथियों के झुण्ड भी होते हैं जिन की संख्या बहुत है और जो बहुत बड़े बड़े होते हैं। ये द्वीपवासी हाथी भारतवर्ष के हाथियों से बलिष्ट देखने में बड़े और यह भी कहा जा सकता है कि देखने में अधिक बुद्धिमान होते हैं। द्वीपवासी वहां के जङ्गली लकड़ी की विशेष प्रकार की नाव बना कर उन्हें उस पर ले जाते हैं और कलिङ्ग के राजा के हाथ बेंचते हैं। द्वीप बड़ा होने के कारण किनारे से दूर रहनेवालों ने कभी समुद्र नहीं देखा है अतएव वे देश में निवास करने वालों की भांई जीवन व्यतीत करते हैं। यद्यपि यह वे निःसन्देह जानते हैं कि उन के चारो ओर समुद्र है। तीरवासी स्वयम् हाथी बझाना नहीं जानते केवल सुन कर के जानते हैं। उन की सब शक्ति मछली तथा समुद्र के जन्तुओं के बझाने में लग जाती है। कहा जाता है कि द्वीप के चारोओर जो समुद्र हैं उस में छोटे से लेकर बड़े २ तक अनन्त मछलियां हैं। बड़ी मछलियों में किसी को सिंह का शिर है किसी को चीते एवम् अन्य वन्यपशुओं का। कोई कोई भेड़ के समान शिरवाले हैं। सब से बड़ा

आश्चर्य तो यह है कि मेटर की आकृति के भी जलजन्तु हैं। दूसरों का स्त्रियों के समान मुख है किन्तु बाल के बदले उन्हें कांटा है। यह भी गम्भीरतापूर्वक कहा जाता है कि समुद्र में विचित्र जीव हैं जिन का तस्वीर बना देना उस देश के चित्रकारों के कौशल से परे है, यद्यपि वे कुतूहल बढ़ाने के लिये ऐसे चित्रों को चित्रित करते हैं जिन में भिन्न २ जन्तुओं के भिन्न २ अङ्ग मिले रहते हैं। इन की पूंछ और ऐंठे हुए अवयव बहुत लम्बे होते हैं और उनके पैर के बदले पंजा या डैना होता है। ये जल और स्थल दोनों में रह सकते हैं। रात को मैदानों में चरते हैं और गाय बैल एवम् दाना चुननेवाली पक्षियों के समान घास खाते हैं। ये खजूर बहुत पसन्द करते हैं और जब पक कर पेड़ से यह चूने लगता है तब ये अपनी कोमल पूंछ को जो बहुत बड़ी होती है इस्की के चारो ओर लपेट कर इतने जोर से हिलाते हैं कि खजूर बहुत गिर पड़ते हैं और उन के स्वादिष्ट भोजन होते हैं। जब रात का शनैः २ अवसान होने लगता है और दिन का पूर्ण प्रकाश नहीं हुआ रहता है तब उषा के प्रथम आगमन से जैसेही पृथिवीतल कुछ उजेला होता है वैसेही वे सब समुद्र में अन्तर्हित हो जाते हैं। लोग कहते हैं कि ह्वेल मछलीभी इस समुद्र में आती है यद्यपि यह सत्य नहीं है कि ये किनारे के निकट छोटी मछली की खोज में आती हैं। डलफिन (Dolphin) मछली दो प्रकार की होती है—एक भीषण, तीखेदांतवाली होती है जो मछुओंको बहुत कष्ट देती है और निर्दय एवम् निष्ठुर होती है; दूसरी स्वभावतः सूधी होती हैं। खेलते हुए कुत्ते के समान इधर उधर कौतुकपूर्वक तैरती फिरती है कोई इसे ठोकता है तो भागती नहीं और जो कुछ खाने को दिया जाता है वह प्रसन्नतापूर्वक खाती है।

(१८) समुद्र का खरहा, जिस के कहने से हमारा तात्पर्य लाल समुद्र के खरहे से है (क्योंकि अन्य समुद्रों के खरहे के विषय में मैं लिख चुका हूं) प्रत्येक बात में स्थलखरहे से मिलते जुलते हैं; केवल रोआं स्थलखरहे का बहुत चिकना सटा हुआ होता है, छूने पर गड़ता नहीं पर समुद्र के खरहे का चमकता हुआ रोआं कांटा के समान होता है और जो कोई छूता है उसे घायल कर देता है। बिना पानी में डूबे हुए यह समुद्र की लहर के ऊपर तैरता है और इस की गति बहुत तीव्र है। इसे जीवित पकड़ लेना सहज बात नहीं है, क्योंकि यह कभी जाल में नहीं पड़ता और न बंसी के निकट जाता है। यदि यह रोगग्रस्त हो जाता है और इसलिये तैरने में असमर्थ हो कर किनारे पर लग जाता है तो इस के छूनेवाले की मृत्यु अवश्यम्भावी है यदि उस का पूरा यत्न नहीं किया जाय। यही नहीं यदि ऐसे खरहे को कोई छड़ी से भी छूए तो उस की यही दशा होती है जैसा विषैले सर्प को छूने से। किन्तु उस द्वीप के किनारे एक जड़ी होती है जो सब को ज्ञात है। इस से जो बेहोशी होती है उस की वही औषधि है। मूर्च्छित पुरुष के नाक में उसे सुंघाते हैं और वह शीघ्र चैतन्य हो जाता है। पर यदि यह उपाय नहीं किया जाय तो घाव प्राणघातक हो जाते, इतना भीषण इस की शक्ति होती है।

(यहां पत्रखण्ड पश्चात् खो दिया हुआ है) *

---

* इस पत्रखण्ड में कर्टजन नामक सींगवाले पशु के विषय में ईलियन ने लिखा है। रोजनमुलर जिस ने भारतवर्षीय पशुओं के विषय में लिखा है, समझता है, कि ईलियन ने यह हस्त

(२२) भारतवर्ष के बाहर स्किरटे † निवास करते हैं। उन की नाक चिपटी होती है। बालपन ही में उन की नासिका दबा दी जाती है जिस से जीवन पर्यन्त ऐसी ही रह जाती है अथवा स्वभावत: उस अवयव का वैसा ही स्वरूप है। उन के देश में बड़े २ सर्प होते हैं जो चरते हुए पशुओं को पकड़ कर निगल जाते हैं। दूसरे प्रकार के सर्प खून चूसते हैं; जैसे थौस के एगोथिले करते हैं और जिन के विषय में उचित स्थान पर कह आया हूं।

एरियन का भारत-विवरण।

(१) सिन्ध नदी से आगे पश्चिम कोफन नदी तक पृथ्वी भारतवर्ष की दो जातियों से बसी है—अष्टकेनोई (Astakenoi) और अस्सकिनोई (Assakenoi)। ये सिन्ध नदी के उस पार रहनेवाले भारतवासियों के समान न ऊंचे डीलवाले अथवा साहसी नहीं होते और न अन्य भारतवासियों के समान श्याम वर्ण होते हैं। प्राचीन समय में वे असीरिया के आधीन थे। कुछ दिन मीडिया के अधीन रह कर फिर उन्हों ने फ़ारसनिवासियों के शासन को स्वीकार किया। कम्बिसस के पुत्र कायरस को ये कर देते थे।

टीसियस से लिया है। टीसियस जब फ़ारस में था तब इस के विषय में उस ने सुना होगा।

† ये किरात जाति के हैं (पत्रलेख लिखित)। लैसन साहब ने लिखा है कि रामायण में लिखा है कि कुछ किरात मन्दर पर्वत पर रहते हैं, कुछ अपने कानों ही को ओढ़ते हैं। वे अत्यन्त भीषण, काले, एक पैरवाले, किन्तु बहुत तीव्रगामी होते हैं। वे निर्मूल नहीं हो सकते। साहसी तथा मानवभक्षी होते हैं।

निसायोई (Nysaioi) भारतवर्ष की जाति नहीं है। वे डायोनिसस के साथ जो भारतवर्ष में आये थे उन्हीं के वंशज हैं। उन में केवल ग्रीक ही लोग नहीं थे जो डायोनिसस के साथ भारतवासियों के विरुद्ध युद्ध करने में आहत हो कर लड़ने से असमर्थ हो गये थे, पर उस देश के निवासी भी थे जिन्हें डायोनिसस ने उन की सम्मति से वहां बसा दिया था। जिस देश में यह उपनिवेश स्थापित हुआ उस का नाइसा पर्वत के नामानुसार निसैया नाम पड़ा और प्रधान नगर का नाम नाइसा ही रक्खा गया। * उस देव के जन्म के बाद शीघ्र ही एक घटना हो गयी थी जिस से नगर के निकटवर्ती पर्वत का नाम, जिस के अञ्चल प्रान्त पर यह नगर बसा है, मोरस पड़ा। अवश्य डायोनिसस के विषय में ये सब कथाएं कवियों की कल्पना मात्र हैं और मैं

---

* नाइसा मदिरा के देव का जन्मस्थान है, अतएव जहां अङ्गूर वृक्ष अधिक पाया जाता है। वहीं इस का स्थान बताया जाता है। कोफिस (काबुल) नदी के किनारे पर कहीं यह नगर था। लासेन साहब को इस नाम का कोई नगर वास्तव में होने का सन्देह था। पर सेन्ट मार्टिन को अधिक सन्देह नहीं है। वे कहते हैं कि यह आधुनिक ग्राम निसट्ट (Nysatta) है। यह ग्राम हश्तनगर से नीचे काबुल नदी के उत्तर किनारे से दो कोस पर है। यही इतिहास का नाइसा हो सकता है। यह नगर मीडिया अथवा फ़ारसनिवासियों का बसाया होगा, क्योंकि इस का नाम ईरानी है। नाइसा अथवा निसाया ज़ेन्दअवेस्ता में भी मिलता है और प्राचीन समय में ईरान के प्रान्तों में बहुत फैला था। इस विषय पर वे हम्बोल्ड साहब की मध्य एशिया " Central Asia " नामक पुस्तक देखने को कहते हैं।

ग्रीक अथवा विदेशीय विद्वानों को इस का अर्थ लगाने के लिये छोड़ देता हूं। अस्सकिनोइ के राज्य में मस्साका * (Massaka) नामक बड़ा नगर है जहां राजा का निवासस्थान है, जो समस्त राज्य का शासन करता है। एक और बहुत बड़ा नगर पिउके-लायटिस † (Peukelaitis) है जो सिन्ध नदी से दूर नहीं है। ये उपनिवेश सिन्ध नदी के उस पार स्थापित हैं और पश्चिम कोफेन नदी तक विस्तृत हैं।

(२) जो देश सिन्ध नदी के पूर्व है उसे ही मैं भारतवर्ष

---

* मस्साका (मस्सगा और मजगा भी) संस्कृत-मशक। गौरी के निकट एक नगर। कर्टियस कहता है कि पूर्व की ओर एक तीव्रगामी नदी से यह रक्षित था। सिकन्दर ने जब आक्रमण किया तब चार दिन तक इस ने सब प्रकार से अपनी रक्षा की।

† पिउकेलाटाटस (पिउकेलायटी)। पाली—पुक्कलावती। संस्कृत—पुष्कलावती। एरियन इसे पिउकेलस भी कहता है और डायोनीसस पेरिगेटिस यहां के निवासियों को पिउकेली कहता है। दोनों पाली पुक्कल से निकला है। एरियन के पेरिप्लस तथा टालेमी के भूगोल में प्रोक्लेस आया है। सम्भवतः इसे हिन्दी की पोखर से सम्बन्ध है। हस्तनगर अथवा आठ नगरों में से दो नगर परङ्ग और चारसद निकट ही स्वात नदी के पूर्व की ओर बसे हैं। यहीं पर इस का प्राचीन स्थान है। पेशावर से यह सतरह मील पूर्वोत्तर पड़ेगा। यह कनिङ्गहम साहब का मत है। विलसन साहब कहते हैं कि पुष्कल पेशावर के निकट आधुनिक पेखली अथवा पखोली है।

प्रधानत: समझता हूं। वहां के निवासी भारतवासी हैं। ‡ इस प्रकार भारतवर्ष की उत्तरीय सीमा टारस पर्वत से बद्ध है, यद्यपि इन प्रान्तों में उस पर्वत का नाम दूसरा है। टारस पर्वत उस समुद्र से प्रारम्भ होता है जो पम्फीलियालीकिया और किलीकिया के किनारों को धोता है, और समस्त एशिया महाप्रदेश को विभक्त करता हुआ पूर्व समुद्र तक चला जाता है। जिन २ प्रदेशों से हो कर यह जाता है उन २ में इस का नाम भिन्न २ है। एक जगह इस का नाम परमीसस * है, दूसरे स्थान में इमोडस और तीसरे में इमाओस। सम्भवत: इस के और नाम भी हैं। सिकन्दर के साथ जो मकोडन-निवासी काम करते थे वे इसे काकेशस कहते थे। यह काकेशस स्काथिया के काकेशस से भिन्न है। इसी से यह कथा कही जाती है कि सिकन्दर काकेशस से भी आगे बढ़ गया था।

---

‡ प्राचीन समय में भारतवर्ष की पूर्वीय सीमा लोग सिन्ध नदी तक बताते थे। हिन्दू लोग स्वयम् इस बात को मानते थे, क्योंकि प्राचीन प्रथा के अनुसार इस के पार जाना उन के लिये मना है। भारतवर्ष हिन्दूकुश तथा परपमिसस पर्वत की जड़ तक विस्तृत है। इस के समर्थन में भी बहुत कुछ कहा जा सकता है। यथा सिन्ध नदी तथा इन पर्वतों के बीच में बहुत से स्थान हैं और वे जिन का नाम संस्कृत से निकला है। यह विषय एल्फिन्स्टन साहि के 'भारतवर्ष का इतिहास' में भली भांति दिया हुआ है।

* परपमीसस (परमीस्सस, परपनीसस)। अब इसे हिन्दूकुश कहते हैं। ग्रीक लोग चाहे सिकन्दर को प्रसन्न करने के

पश्चिम की ओर भारतवर्ष की सीमा समुद्र तक लगातार

लिये, अथवा इसे काकेशस ही का विस्तार समझ कर, इसे 'इनडकिस काकेशस' कहते थे। अनुमान है कि हिन्दूकुश इसी का अपभ्रंश है। एरियन तथा औरों ने इसे टारस पर्वत का विस्तार बताया है। ये पर्वत काबुल नदी के उत्तर निषाद कहलाते हैं (लासेन साहेब के अनुसार)। यह संस्कृत से निकला है। टालेमी का परपमीसस इसी से सम्भवतः सम्बन्ध रखता है। प्लीनी कहता है कि स्कीथियन लोग इसे काकेशस ग्रौकसिस कहते थे जो हिन्दुस्तानी में ग्रवक्षस होगा। कनिङ्हम के अनुसार ज़ेन्दअवेस्ता का परेश और अपरसिन ग्रीक लोगों का परपमीसस है। सेन्ट मार्टिन साहब कहते हैं कि पर= पर=परत (दिहाती) (जेन्द का परौत) जिस का अर्थ पर्वत होता है। पर निषाद और पर के बीच में 'प' का अर्थ वे नहीं लगा सकते। इस पर्वत के विषय में पहला ग्रीक लेखक अरिस्टाटल है जो इसे परनेसस कहता है। इस पर्वत का अब पूर्वभाग हिन्दूकुश और पश्चिम भाग परपमीसस कहलाता है। बर्नेस साहब कहते हैं कि हिन्दूकुश नाम अफ़ग़ानों को ज्ञात नहीं है, पर अफ़ग़ानिस्तान और तुर्किस्तान के बीच में एक शिखर और एक पहाड़ी राह है, जिस का नाम इमोडस (इमोडा, इमोडन, हिमोडस) है। हिमालय के उस भाग का यह नाम है, जो तिब्बत और भूटान से समुद्र तक फैला हुआ है। लासेन साहब का कथन है कि यह संस्कृत हिमवत् से निकला है। प्राकृत हिमोत होगा। इस का अधिक शुद्ध नाम तब हिमोडस ही होगा। कुछ लोग इसे 'हैमाद्रि' का अपभ्रंश कहते हैं।

सिन्ध नदी से बड़ा है। इसी समुद्र में यह नदी दो मुहाने से अपना जल गिराती है। इष्टर (डान्युब) नदी के पांचों मुख के समान ये एक दूसरे के निकट नहीं हैं, किन्तु नाइल नदी के समान, जिस के मुहानों से डेल्टा बनता है अलग २ हैं। सिन्ध नदी भी इसी प्रकार से एक डेल्टा बनाती है, जो इजिप्ट के डेल्टा से छोटा नहीं है। यह पट्टल † कहलाता है।

दक्षिण पश्चिम तथा दक्षिण की ओर भारतवर्ष उपरोक्त महासागर से बंधा है, जो इस की पूर्वीय सीमा भी है। सिन्ध नदी तथा पट्टल के निकट इस के दक्षिण भागों को सिकन्दर तथा अन्यान्य बहुत से ग्रीस निवासियों ने देखा, पर पूर्व की ओर सिकन्दर हिफासिस नदी से आगे नहीं गया। तथापि कुछ ग्रन्थकारों ने गङ्गा नदी तथा इस के मुहाने के निकट का देश एवम् पालिम्बोथ्रा नगर का जो भारत में सब से बड़ा है, वर्णन किया है।

---

† इस डेल्टा का नाम पाटलीन था राजधानी पाटल थी। डेल्टा के शीर्ष पर जहां से सिन्ध की दो शाखाएं हो गयी हैं वहीं यह था। प्राय: लोग इसे आजकल का ठठा (Thatha) बताते हैं, पर कनिङ्गहम साहब प्राय: निश्चय के साथ इसे निरङ्कोलया हैदराबाद कहते हैं, जिस का प्राचीन नाम पाटलपुर या पाटशिला था। उन के अनुसार इस का नाम पाटलपुष्प से पड़ा होगा। और डेल्टा का आकार भी पाटलपुष्प के ऐसा है। एरियन ने इस के आकार को कुछ बढ़ा कर दिया है क्योंकि इस त्रिभुज का आधार पिल्ति से कोरी तक १००० स्टेडियम था और शिरक्षेत्र का १२०० स्टेडियम था।

(३) अब मैं भारतवर्ष के आकार * का वर्णन करूंगा। इस विषय में मैं काइरीन के एरटोस्थेनीज़ का अनुसरण करूंगा, जिस ने इस विषय का विशेष अनुसन्धान किया है। वह कहता है कि यदि एक रेखा टारस पर्वत से खींची जाय, जहां से सिन्ध नदी निकलती है, और वह रेखा उस नदी के साथ २ उस के मुहाने तक और समुद्र तक बढ़ाई जाय तो उस का माप १३००० स्टेडियम होगा। किन्तु उस के प्रतिकूल भुजा की लम्बाई, जो टारस के उसी स्थल से पूर्वीय समुद्र के साथ साथ चलता है, कुछ और ही होगी, क्योंकि एक केप समुद्र में दूर तक ३००० स्टेडियम चला गया है। उस के माप के अनुसार पूर्व का भुजा १६००० स्टेडियम होगा और इतना ही वह भारत की चौड़ाई कहता है। फिर वह कहता है कि पूर्व से पश्चिम की लम्बाई पालिब्बोथ्रा तक १०,००० स्टेडियम है, क्योंकि एक राजकीय पथ था, जो शियनिस † से नापा गया था। किन्तु पालिब्बोथ्रा से आगे भली भांति नहीं पाया गया था। जो केवल दन्तकथा से सुन कर लिखते हैं उन का कथन है कि भारतवर्ष की चौड़ाई उस केप से ले कर जो समुद्र में गया है १०,००० स्टेडियम है और उस की लम्बाई किनारे से नापने से २०,००० स्टेडियम है।

---

* स्ट्रेबो का माप एरियन से अधिक ठीक है, तथापि वे अधिक शुद्ध नहीं है। कनिङ्हम साहब कहते हैं कि यह आश्चर्य की बात है कि भारत का आकार भली भांति विदित न हो, निश्चय भारतवासी उस समय भी अपने देश का आकार जानते थे।

† १ शियनिस = ६० स्टेडियम।

मीड्स काटीशियस कहता है कि भारतवर्ष आकार में समस्त एशिया के बराबर है। पर यह असम्भव है। ओनेसिक्राइ-टस भी असम्भव बात कहता है कि यह समस्त संसार का तृतीयांश है। नियारकस कहता है कि केवल भारत के मैदानों को पार करने में चार मास लग जाते हैं। और मेगास्थनीज़ कहता है कि भारत पूर्व से पश्चिम चौड़ा है जहां अन्य लेखक कहते हैं कि यह इस की लम्बाई है। उस के अनुसार जहां सब से कम इस की चौड़ाई है वहां यह १६००० स्टेडियम है। और इस की लम्बाई अर्थात् उत्तर से दक्षिण जहां बहुत कम है वहां २२००० स्टेडियम है। किन्तु जो कुछ इस का आकार हो निश्चय भारतवर्ष की नदियां एशिया भर में सब से बड़ी हैं। सब से बड़ी गङ्गा और सिन्ध हैं। सिन्ध (इन्डस) ही से भारतवर्ष का नाम पड़ा है। मिस्र की नाइल और स्कीथिया की इस्टर यदि मिला दी जायं तो भी दोनों बड़ी ठहरेंगी। मैं समझता हूं कि हिडास्पिस और हिड्राओटिस को लेती हुई जहां अकेसिनस सिन्ध नदी में गिरती है वहां यह भी नाइल अथवा इस्टर से बड़ी है, क्योंकि उस स्थान पर यह ३०० स्टेडियम चौड़ी है। यह भी सम्भव है कि वहां अन्य बहुत सी और भी बड़ी २ नदियां हैं जो भारतवर्ष में हो कर बहती हैं।

४—किन्तु हिफासिस नदी के आगे का जो मेरा ज्ञान है उस की शुद्धता के विषय में मैं पूर्ण विश्वास नहीं दिला सकता, क्योंकि सिकन्दर की गति उस नदी से रुक गयी। पर गङ्गा और सिन्ध—दो सब से बड़ी २ नदियों के विषय में, मेगास्थनीज़ कहता है कि दोनों में गङ्गा बड़ी है। अन्य लेखक जो गङ्गा

के विषय में लिखते हैं वे भी इसे स्वीकार करते हैं। जड़ पर बड़ी होने पर भी इस में कैनस, एरानोबोग्रास ग्रौर कौस्सोनस गिरती हैं। ये सब नौका चलाने योग्य हैं। इस के ग्रतिरिक्त इस से सोनस, सिट्टोकटिस ग्रौर सोलोमटिस सङ्गम करती हैं जो सब नौका चलाने योग्य हैं। इस में कण्डोचेटिस, सम्बस, मेगन, ग्रगोरनिस ग्रौर ग्रोमलिस भी मिली हैं। ग्रौर इस में एक बड़ी नदी कम्मनासेस, ग्रौर ककथिस तथा ग्रन्डोमटिस जो मद्यन्डिनोई जाति के राज्य से हो कर ग्राती हैं, गिरती हैं। फिर ग्रमिस्टिस जो कटडुप नगर से हो कर बहती है, ग्रस्मिगिस जो पजलई जाति के राज्य से हो कर बहती है ग्रौर एरेनिसिस जो मथई जाति के देश से होती हुई जाती है, सब गङ्गा * में गिरती हैं। इन सब नदियों के विषय में

---

* एरियन यहां १७ नदियों का नाम लेता है जो गङ्गा में गिरती हैं। प्लीनी १९ नाम गिनाता है ग्रौर उन में प्रिनस ग्रौर जोमानेस को जोड़ता है। ग्रन्यस्थल में एरियन भी जोबारेस कह कर इसे लिखता है। बड़े २ विद्वान् यथा रैनेल, विलफोर्ड स्लेगेल, लासेन, श्रानबेक ग्रादिकों ने ग्रनुसन्धान कर के इन सब नामों का पहचान कर लिया है। सेन्टमार्टिन ने उन के सन्दिग्ध विषय तथा भूलों को संशोधन कर स्पष्ट कर दिया है। ग्रब मैं उन का पहचान नीचे लिखता हूं :—

कैनास—कन ग्रथवा केन नदी जो यमुना में गिरती है। संस्कृत सेन (श्वानबेक के ग्रनुसार) ग्रथवा कायन (सेन्ट मार्टिन के ग्रनुसार)।

एरानोबोग्रास—एरियन लिखता है कि पालिम्बोथ्रा इसी नदी ग्रौर गङ्गा के सङ्गम पर स्थित था। निश्चय यह सोन होगा

मेगास्थनीज़ कहता है कि मयामडुस में जहां नाव चलती है

जो पहले बांकीपुर से आगे पटना के पच्छिम गिरता था, पर अब यह वहां से १६ मील और ऊपर गिरता है। संस्कृत—हिरण्यवाहा, हिरण्यवाहु। मेगास्थनीज़ और एरियन सोन तथा एरानोबोआस को दो नदी बताते हैं। अतएव कुछ लोग एरानोबोआस को गंडक बतलाते हैं। लासेन साहब भी कहते हैं कि बौद्धों के अनुसार गंडक का नाम हिरण्यावती था। पर यह इतनी छोटी नदी है कि यह गङ्गा और सिन्धु के बाद सब से बड़ी नदी नहीं कही जा सकती, जैसा वर्णित है। सम्भवत: सोन मेगास्थनीज़ के समय में दो धारा से होकर गङ्गा में गिरता होगा जिस से उस ने दोनों धाराओं को दो स्वतन्त्र नदियां समझ लिया।

कौस्सोगस—प्लिनी इसे कौसोगस लिखता है अतएव यह संस्कृत कौशिकी का अपभ्रंश समझा गया है। आज कल इसे कोशी कहते हैं। श्वानबेक के अनुसार यह कोषवाहा का अपभ्रंश और सोन का नामान्तर है। एरियन एरानोबोआस और सोन के बीच में इस का नाम लेता है इस से इस अनुमान का कुछ समर्थन होता है।

सोनस—सोन, जो दानापुर से दस मील ऊपर गङ्गा में मिला है सुवर्ण से बना होगा। इस का यह नाम बालु पीला होने से अथवा इस में स्वर्णधूलि बहने से पड़ा होगा।

सिट्टोकटिस—यह कौन नदी है अभी तक निश्चित नहीं हुआ है। सेण्टमार्टिन साहब कहते हैं कि महाभारत में सदा कान्ता, कौष धारा (कोसी) सदानीर (करतोया) और अधीष्य (अत्रेयी) इन नदियों का नाम साथ २ आया है। सिट्टोकटिस

वहां से मिलाने से भी ये सब नदियां छोटी नहीं होंगी। गंगा की

सदाकान्ता हो सकती है। प्रकरण से ज्ञात होता है कि अन्य तीन नदियों के समान यह भी बङ्गाल में कहीं होगी।

सोलोमटिस—इस का भी ठीक पता नहीं लगता है। कनिङ्गहम साहेब अपने भूगोल में इसे सरष्ज़ू अथवा सरयू, घाघरा की एक शाखा बताते हैं। वेनफी साहेब कहते हैं कि यह प्रसिद्ध सरस्वती है जो पौराणिक कथा के अनुसार नीचे लुप्त हो कर इलाहाबाद में गङ्गा में आ मिली। लासेन साहेब का मत है कि यह सारावती का अपभ्रंश है जो कोशल देश का प्रधान नगर था। इस के विषय में कालिदास तथा पुराणों में भी लिखा है। वे प्राय: इसे श्रावस्ती लिखते हैं। जिस नदी पर यह नगर था उस का नाम कहीं नहीं लिखा है। निश्चय इस का भी नाम सारावती ही होगा, क्योंकि अब उस देश की नदी का नाम राप्ती है।

कण्डोचेटिस—गंडक। संस्कृत—गंडकी अथवा गंडकावती, क्योंकि इस में घोंघ बहुत होते हैं। कोशल देश की पूर्वीय सीमा थी। पालीबोथ्रा के सामने गङ्गा में गिरती है।

सम्बस—सम्भवत: यह गोमती नदी है, जिस का कुछ अंश लखनऊ से कुछ नीचे शम्बु कहलाता है।

मैगन—मैनर्ट साहेब के अनुसार यह रामगंगा है, किन्तु अधिक सम्भव है कि यह महानद है। आजकल इस को महोन कहते हैं जो मगध की प्रधान नदी है और पटना से थोड़ी दूर आगे गिरती है।

अगोरनिस—रेनेल के अनुसार घाघरा—संस्कृत घर्घरा। सेण्टमार्टिन के अनुसार अनेक गौरी नामक नदियों में से यह एक है। ग्रामीण भाषा में यह गौरन कहलाता है।

चौड़ाई जहां सब से कम है वहां १०० स्टेडियम है और कहीं

ओमलिस—नहीं ज्ञात हुआ है।

कम्मनासेस—रेनेल और लासेन इसे कर्मनाशा बताते हैं, जो बक्सर से ऊपर गंगा में मिलती है।

ककूथिस—मैनर्ट भूल कर इसे गोमती कहता है। लासेन कहता है कि यह बौद्ध ग्रन्थों का काकुत्थ है। अतएव वह बाङ्मती (अथवा भगवती) नामक नदी है।

अण्डोमटिस—संस्कृत—अन्धमतिः। लासेन के अनुसार यह तमसा नदी है जिसे आजकल टोन्सा कहते हैं, क्योंकि दोनों का अर्थ एक ही है। पर यह मध्यण्डिनी अथवा माध्यन्दिनः के देश होकर आती थी जो दक्षिण देश के निवासी थे। विल्फ़ोर्ड साहब का अनुमान है कि यह वर्तमान की निकटवर्ती दम्मदा नदी है अधिक युक्त जंचता है।

अमिस्टिस—यह नदी कटदूप हो कर जाती थी। अब उसे कटवा (दक्षिण बङ्गाल) कहते हैं जो अजली और गङ्गा की सङ्गम पर है। कटवा का संस्कृत कटद्वीप होगा। इस से मार्टिन साहब इस मत के पक्ष में हैं। अमिस्टिस तब अजी अथवा अजावती होगी।

अक्सिमेगिस—पजलङ्ग अथवा पसलङ्ग जाति (संस्कृत पङ्कल) दोआब में रहते थे। यहीं से अथवा इसी के निकट से इक्षुमती बहती थी। ग्रीकभाषा में 'ग' और 'त' एक ही समान लिखा जाता है। मेगास्थनीज़ ने अक्षिमेतिस लिखा होगा।

एरेनिसिस—वाराणसी से मिलता है जो वरुणा और असी के मिलने से होता है। ये नदियां बनारस के निकट गंगा में मिलती हैं। मथई मगध के लोग हो सकते हैं। सेण्टमार्टिन

स्थानों में इस के फैलने से झील बन जाते हैं। इस से जब कोई प्रान्त समतल रहता है और ऊंचा नहीं रहता तब दोनों कूल नहीं दीख पड़ते। सिन्ध की भी वही बात है †। हिड्रायोटिस नदी अस्ट्रीबे से होती हुई हिफासिस को लेकर, केकियन से सरङ्गस को तथा अट्टकिनोई से निउड्रस को लेकर अकेसिनिस में गिरती है। हिडासपेस अक्सिड्राई के राज्य से निकल कर और अरिस्पे के राज्य से सिनारस को लेती हुई अकेसिनिस में गिरती है और अकेसि-

---

उन्हें गंगा और गोमती के मुंह के बीच के निवासी मानते हैं। हिवेनसैङ्ग के हस्त के अनुसार उन की राजधानी गंगाद्वार (हरिद्वार) के निकट मतिपुर थी। उस समय तक उन लोगों ने उन के नाम को दूरव्यापी कर दिया होगा। एरियन ने मियन का उल्लेख नहीं किया है। यह तमसा नदी है जिसे प्रणाशा भी कहते हैं। कैनस जिस प्रान्त में है उसी प्रान्त की यह भी नदी है। प्लीनी दोनों का साथ २ नाम लेता है।

† अब सिन्धु नदी में जो नदियां गिरती हैं उन का नाम दिया जाता है। यहां एरियन केवल १३ नाम गिनाता है, किन्तु अपनी दूसरी किताब में वह कहता है कि इन की संख्या १५ थी। स्ट्राबो भी इतना ही कहता है, पर प्लीनी १९ का नाम लेता है।

हिड्रयोटिस—नामान्तर रुएडिस अथवा हिराओटिस। अब यह रावी कहलाती है, जो संस्कृत ऐरावती से बनी है। कथा है कि ऐरावत हस्ति ने दांतों से पर्वत फोड़ कर नदी को निकाला था। कम्बिष्ठोली का नाम और कहीं नहीं मिलता। ब्लामबेक साहेब कहते हैं कि यह कपिस्थल हो सकता है। बीच में एक 'म' चला आया है, जैसे पालिम्बोथ्रा में चला आया है। विलसन साहेब के इस अनुमान को कि वे लोग काम्बोज

नेस मल्ली के राज्य में सिन्धु नदी से मिलती है। पर इस के पूर्व

थे, ये भ्रममूलक बताते हैं। एरियन भूल से लिखता है कि हिफेसिस हिड्रायोटिस में गिरती है, क्योंकि वास्तव में यह अकेसिनिस में गिरती है।

हिफेसिस—(नामान्तर—विवासिस, हियासिस, हियानिस) संस्कृत विपाशा; आधुनिक व्यास अथवा बिआस। शतद्रु में मिल जाने पर इस का नाम लुप्त हो जाता है। टालेमी शतद्रु को जारिड्स कहता है जिसे अब सतलज कहते हैं।

सरङ्गस—अज्ञात। केकियन जिस के देश से होकर यह बहती थी वे लासेन साहेब के अनुसार शाक्य लोग होंगे।

निउड्रस—अज्ञात। अहकिनोई—अज्ञात। असिकिनोइ का रूपान्तर हो तो हो सकता है।

हिडास्पेस—टालेमी के अनुसार बिडास्पेस, जो संस्कृत विस्तता से अधिक मिलता है। अब इसे वेहुत अथवा झेलम कहते हैं। इस के तीरवासी इसे वेदस्ता कहते हैं। होरेस और वर्जिल ने भी इस के विषय में लिखा है। पोरस के राज्य को यह पश्चिमीय सीमा थी।

अकेसिनिस—आधुनिक चेनाब। संस्कृत असिक्नी वेदों में आया है। पीछे चन्द्रभागा इस का नाम पड़ा। ग्रीक में संड्रोफैगस होगा। टालेमी इसे सन्दबागा कहता है। प्लीनी ने इसे कन्द्रबा-कर दिया। मल्ली जिन के देश में यह नदी सिन्धु से मिलती है संस्कृत में मालव है।

ट्टापस—सम्भवत: शतद्रु के नीचे का भाग।

कोफेन—हर्बो तथा प्लीनी ने इसे कोफेस अथवा कोफेटिस भी लिखा है। अब इसे काबुल नदी कहते हैं। तीन नदियां

एक ओर नदी टूटापस का जल सम्मिलित कर लेती है। इन सब नदियों के मिलने से अकेसिनस बड़ी होजाती है और वे सब नदियां सिन्धु नदी में जहां गिरती हैं वहां तक इसी के नाम से पुकारी जाती हैं। कोफिन नदी भी पिउकेलापटिस से निकल

जो इस में गिरती हैं वे सुवस्तु, गौरी और कम्पन है जो महाभारत के छठें पर्व में दी हुई हैं। सोआस्टस निश्चय सुवस्तु है और गरिया भी गौरी है। सोआस्टस को कर्टियस और स्ट्रेबो चोआस्पस कहते हैं। सैनर्ट साहब के अनुसार सोआस्टस और गरिया एक ही हैं। लासेन साहेब का मत है कि सोआस्टस आधुनिक सुआद अथवा स्वात नदी है और गरिया नदी उसी में गिरनेवाली पञ्चकोरा है। कनिङ्घम साहब भी यही मानते हैं। मलमण्टस को कुछ लोग खोएस बताते हैं जिसे एरियन ने अपने अनावसिस नामक ग्रन्थ में लिखा है। अब यह कमेह या खोनर कहलाती है और काबुल नदी में गिरनेवाली सब नदियों में बड़ी है। दूसरे इसी को पञ्जकोरा कहते हैं। कनिङ्घम का विचार है कि यह बारा नदी है, जो दक्षिण से आकर काबुल में गिरती है। काबुल का नाम वेदों में कुभ आया है। पर यह संस्कृत का शब्द नहीं है, इस से ज्ञात होता है कि आर्यों के आने के पहिले से इस का यह नाम चला आता है। प्राचीन लेखक लिखते हैं कि खोएस, कोफेस और खोआस्पस सिन्धु नदी के पश्चिम हैं। आजकल कुनार, कुरम, गोमल पश्चिम हैं। कुहोनार सिन्धु से पूरब है। ये सब स्कीथिया का शब्द कुञ्जल से बना है। पर्शियया काहु, तुर्की सु, तिब्बती चु सब का अर्थ जल है। टालेमी लिखता है कि कोफेन के किनारे काबुर नामक एक नगर है वहां के निवासी काबुलिटे हैं।

कर मलन्टस, सोआस्टस, और गरोया को लेती हुई सिन्धु नदी में गिरती है। इन से कुछ परेनस तथा सपर्नस एक दूसरे के निकट ही सिन्धु नदी में गिरती हैं। उसी प्रकार सोआनस जो अबिसरियन के पहाड़ी प्रदेश से आता है उस में गिरता है। मेगास्थेनीज़ के अनुसार प्राय: इन सब नदियों में नाव चलती है। तब हम लोगों को अविश्वास नहीं करना चाहिये कि गङ्गा और सिन्धु इस्टर तथा नाइल से कहीं बड़ी हैं। नाइल में कोई नदी नहीं गिरती वरन् इस का जल नहरों को भरने के लिये खींचा जाता है। इस्टर जड में बहुत छोटी नदी है। यद्यपि इस में बहुत सी नदियां गिरती हैं तथापि न तो ये सिन्धु और गङ्गा में गिरनेवाली नदियों को संख्या में समानता कर सकती हैं और न ये उन के समान नौका ही चलाने योग्य हैं—केवल दो एक हैं, यथा इन्न और सेव जिन में नौका चल सकती है और जिन्हें मैं ने स्वयम् देखा है। जहां नोरिकन पनोटियन के साथ आगे * बढ़ते हैं वहीं इन्न इस्टर में गिरती है। और सेव पन्नोनियन के राज्य में टाकनस के

परेनस—सम्भवत: आधुनिक बुरिन्दु।

सपर्नस—सम्भवत: अब्बसिन।

सोआनस—संस्कृत सुवन आधुनिक स्वान। अविसारीयन, जिस के देश से हो कर यह आती है वह संस्कृत का अभिसार हो सकता है। एरियन ने अपने ग्रन्थ में अविसरेस राजा का वर्णन किया है। ग्रीक लोगों ने जो राजाओं के नाम दिये हैं उन में तथा जातियों के नाम बहुत कम अन्तर है।

* यकनम—आधुनिक सेमलिन।

निकट गिरती है। कुछ और नौका चलाने योग्य नदियां इस्टर में गिरती होंगी जो दूसरों को ज्ञात हों पर उन की संख्या अधिक नहीं हो सकती।

(५) यदि कोई भारतवर्ष की नदियों के वैपुल्य एवम् विशालता का कारण बतलाना चाहे तो कहे। मैं इस विषय में अन्य विषयों के समान जो कुछ सुना है लिख चुका हूं। मेगास्थेनीज़ ने सिन्धु और गङ्गा से आगे की अन्य नदियों का नाम दिया है जो पूर्व महासमुद्र और दक्षिण महासमुद्र में गिरती हैं। सब मिला कर ५८ ऐसी नदियां होंगी जो जलयात्रा योग्य हैं। पर मेगास्थेनीज़ ने भी भारत के अधिकांश प्रान्त में नहीं भ्रमण किया था। तथापि फ़िलीप के पुत्र सिकन्दर के साथ जो गये थे उन से उस ने अधिक देखा था क्योंकि वह कहता है कि भारतवर्ष के सब से बड़े नरपति सण्ड्रकोट्टस की राजसभा में तथा उस से भी बड़े राजा पोरस की राजसभा में वह रहता था। वही मेगास्थनीज़ कहता है कि भारतवासी न तो दूसरे पर आक्रमण करते हैं और न दूसरे ही इस पर आक्रमण करते हैं। क्योंकि मिश्रदेशी सेसोस्ट्रिस एशिया का अधिकांश विजय कर अपनी सेना के साथ यूरोप तक गया और फिर घर लौट गया। और स्कीथियानिवासी इडान्थिरस ने स्कीथिया से निकल कर एशिया की अनेक जातियों को विजित किया और अपना विजयी सैन्यबल मिश्र के किनारे तक ले गया। और फिर सेमिरमिस असीरिया की रानी ने भारत पर आक्रमण करने की तैयारी की, पर इस के पूर्व ही वह मर गयी। सिकन्दर ही एक विजेता हुआ जिस ने भारत का विजय किया। बहुत सी कथाएं प्रचलित हैं कि सिकन्दर के पहले डायोनिसस ने भारत

पर आक्रमण किया था और भारतवासियों को दमन किया था। पर हेराक्लीज़ के विषय में कथा भी अधिक नहीं है। बखो के आक्रमण का नाइसा का नगर साधारण स्मारक नहीं है। और मीरस पर्वत दूसरा स्मारक उदाहरण है जहां इश्कपेचा फैलती है और जहां भारतवासियों की प्रथा है कि डायोनिसस के बक्कानल लोगों के समान बूटेदार कपड़े पहन कर ढोल और झाल के साथ वे युद्ध करने जाते हैं। हेराक्लीज़ के स्मारक बहुत कम हैं और इन की सत्यता में भी सन्देह है। यह कथन कि हेराक्लीज़ अयोनेस का पर्वत दुर्ग नहीं ले सका था जिसे सिकन्दर ने बलपूर्वक हस्तगत कर लिया केवल मकीडन लोगों का डींग मालूम होता है, जिस प्रकार वे परपमीसस को काकेशस कहते हैं, यद्यपि इस से और काकेशस से कोई सम्बन्ध नहीं है। वही डींग हांकने के लिये जब परपमीसदय के राज्य में जब एक बड़ी गुफा मिली तब उन ने उसे प्रमीथियस * टाइटन की गुफा ठहराया जिस में आग चुराने के लिये वह लटकाया गया था। फिर जब वे भारतजाति शिबई के देश में आये तब उन्हें चमड़ा पहनते देख कर कह दिया कि ये हेराक्लीज़ के अनुगामी जो पीछे छुट गये थे उन्हीं के वंशज हैं। सिबाई खाल परिधान करने के अतिरिक्त एक छड़ी भी ले चलते हैं और बैलों की पीठ पर एक गदा का दाग देते हैं। इसे मकीड़नों ने हेराक्लीज़ की गदा का स्मारक मान लिया। यदि यह सब विश्वास भी कोई करे तब यह हेराक्लीज़ थीब का नहीं कोई दूसरा ही हेराक्लीज़ होगा। चाहे वह मिस्र का

---

* बैमान के निकट बड़ी २ गुफाएं हैं उन्हीं में से कोई होगा।

हो अथवा टायर का हो, या किसी उत्तर देश का बड़ा राजा होगा जो भारतवर्ष से दूर नहीं है।

(६) विषयान्तर लेकर तथा जिन लेखकों ने हिफासिस के आगे का वृत्तान्त दिया है उन को अप्रमाणित करने के लिये यह कहा जा सकता है। सिकन्दर के साथ जो लेखक थे वे एकदम अविश्वास योग्य नहीं हैं जहां वे हिफासिस तक भारतवर्ष का विवरण देते हैं। इस के आगे हम लोगों को देश का यथार्थ ज्ञान नहीं है। निम्न वृत्त मेगास्थनीज़ सिलास नदी के विषय में देता है।—इस का नाम सिलास है। उसी नाम के झील से निकल कर यह सीलियन लोगों के राज्य से हो कर बहती है। इस जाति का नाम उसी झील तथा नदी के नामानुसार पड़ा है। इस नदी के जल में एक विशेषता है। इस में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जिस से ये नौका चलाने की राह निरूपण करें। इस में कोई पदार्थ नहीं उतराता न तैर सकता। सब चीज़ नीचे बैठ जाता है। अतएव पृथ्वी भर में इस के जल के ऐसा कोई पतला और सूक्ष्म पदार्थ नहीं है। अस्तु। भारतवर्ष में वर्षा ग्रीष्म में होती है विशेषतः परपमीसस, इमोडस और इमाओस पर्वत पर और जो नदियां इन से निकलती हैं वे बड़ी और गदली होती हैं। उसी ऋतु में भारत के मैदानों में भी वर्षा होती है जिस से अधिकांश देश जलमग्न हो जाता है। और वस्तुतः मध्यग्रीष्म में सिकन्दर की सेना को अकेसिनस के किनारे से शीघ्र हट जाना पड़ा क्योंकि इस के जल से निकटवर्ती भूमि डूब गयी थी। तुलना करके इन बातों से हम लोग यह अनुमान कर सकते हैं कि नाइल नदी जो इसी प्रकार बढ़ती है उस का कारण यह है कि एथियोपिया के पर्वतों पर भी ग्रीष्म में वर्षा

होती है और उसी वर्षा के जल से उस के दोनों कूल प्लावित हो जाते हैं और समस्त मिश्र में बाढ़ आ जाता है। हम लोग देखते हैं कि यह नदी अन्यों के समान उसी ऋतु में गदला हो कर बहती है। यदि हिम के गलने से यह बढ़ता तो ऐसा नहीं होता और यदि इटेशिया से झड़ बहने के कारण (जो गरमी भर बहते हैं) इस का जल इस के मुहाने से हो कर चढ़ आता है तब भी ऐसा नहीं होता। हिम गल कर आना तो असम्भव है, क्योंकि तीक्ष्ण धूप रहने के कारण एथियोपिया के पर्वत पर बर्फ जम नहीं सकता, पर भारतवर्ष के समान वहां भी वृष्टि हो यह असम्भव नहीं है, क्योंकि भारतवर्ष अन्य विषयों में एथियोपिया से भिन्न नहीं है। जैसे एथियोपिया और मिश्र में नाइल में मगर होता है उसी प्रकार भारतवर्ष की नदियों में भी मगर होता है। और जैसे इन में मछलियां तथा बड़े २ जन्तु होते हैं उसी प्रकार नाइल में भी होते हैं। केवल हिपोपटेमस इन में नहीं होता यद्यपि ओनेसिक्राइटस कहता है कि यह भी यहां होता है। भारतवर्ष और एथियोपिया के निवासियों के ढांचे में अधिक अन्तर नहीं है। जो भारत के दक्षिण-पश्चिम भाग के निवासी हैं उन से एथियोप लोगों से अधिक समानता है, क्योंकि वे कृष्णवर्ण और काले बालवाले होते हैं, तथापि उन की नासिका चिपटी नहीं होती, न उन के बाल ही होते हैं। और जो भारतवासी उत्तर भाग में रहते हैं वे मिश्र देशवासियों की आकृति के होते हैं।

(७) मेगास्थनीज़ कहता है कि भारत की जातियां संख्या में ११८। हैं [मैं उस के साथ इस बात में सहमत हूं कि उन की संख्या अधिक होगी। परन्तु जब वह इस प्रकार निश्चित

संख्या बतलाता है तब मैं नहीं समझ सकता कि वह किस प्रकार इसे जान सका; क्योंकि भारत के अधिकांश भाग में वह कभी नहीं गया और वहां की सब जातियां एक दूसरे के साथ सम्बन्ध नहीं रखतीं।] इस के अतिरिक्त वह कहता है कि भारतवासी प्राचीन समय में स्कीदिया के उन लोगों के समान भ्रमण करनेवाले मनुष्य थे, जो कृषि नहीं करते थे, जो अपनी गाड़ियों में ऋतुपरिवर्तन के अनुसार स्कीदिया के एक भाग से दूसरे भाग में घूमा करते थे और जो न नगरों में निवास करते थे और न मन्दिरों में देवार्चा करते थे। भारतवासियों को भी न नगर थे न मन्दिर थे। वे ऐसे असभ्य थे कि वे ऐसे जन्तुओं को चर्म परिधान करते थे, जिन्हें वे मार सकते थे, और वृक्षों का छाल भोजन करते थे। भारतीय भाषा में इन वृक्षों को 'टल' कहते हैं और तार के वृक्षों के समान उन के गंदे को नांई इन पर भी फल लगता है। और कम से कम डायोनीसस के आने के पहले वे जिन बनैले पशुओं को पकड़ पाते थे उन का मांस कच्चे ही खाया करते थे। जब डायोनिसस आया और उन पर विजय प्राप्त की तब उस ने नगरों को बसाया, उन नगरों में नियम का प्रचार किया, भारतवासियों में मद्य का व्यवहार आरम्भ कराया जैसा ग्रीक लोगों में कराया था, और उन्हें भूमि बोने सिखलाया और स्वयम् इस कार्य के लिये बीज उस ने दिया। सम्भवत: ट्रिपटालेमस जब डिमीटर द्वारा समस्त पृथ्वी को बोने के लिये भेजा गया था तब इन प्रान्तों में नहीं आया था; अथवा यह कोई डायोनीसस होगा जिस ने ट्रिपटालेमस के आने के पहले आकर भारतवासियों को कृषि योग्य उद्भिदों के बीज को दिया होगा। यह भी कहा जाता है कि डायोनिसस

ने पहले पहल बैलों से हल चलाया था और बहुत से भ्रमण करनेवाले भारतवासियों को किसान बनाया था और कृषि के यंत्रों को उन्हें दिया। भारतवासी अन्य देवताओं की उपासना करते हैं और विशेष कर झांझ और मृदङ्ग के साथ डायोनीसस की, क्योंकि उसने ऐसी ही शिक्षा दी थी। उसने सेटर के समान नाचना भी सिखलाया था, और उसने भारतवासियों को लम्बा बाल रखने और पगड़ी पहनने सिखलाया। और उस ने उन्हें तैलमर्दन करने बताया। सिकन्दर के समय तक भारतवासी झांझ और मृदङ्ग ही द्वारा युद्ध के लिये सज्जित किये जाते थे।

(८) जब वह भारतवर्ष में नूतन संस्थाएं स्थापित करके जाने लगा तब, कहा जाता है कि उस ने अपने एक साथी स्पटेम्बस को जो बैकस के विषयों से पूर्णतः अभिज्ञ था देश का राजा नियत कर गया। जब स्पटेम्बस की मृत्यु हुई तब उस का पुत्र बूडियस राजा हुआ। पिता का राज्य ५२ वर्ष तक हुआ और पुत्र का २० वर्ष तक। उस के बाद बूडियस के पुत्र क्रेडियुस को राज्य हुआ और तदनन्तर राज्य का अधिकार वंशानुक्रम से लोगों को प्राप्त होने लगा, परन्तु जब राजवंश में कोई नहीं रहा तब भारतवासियों ने योग्यता देखकर राजा निर्वाचित किया। हेरैक्लीज़ जो इस समय समझा जाता है कि उस देश में विदेशी बन कर गया था, वह वास्तव में भारत ही का निवासी था। हेरैक्लीज़ की विशेष प्रतिष्ठा शौरसेनी लोग करते हैं, जिन्हें मेथोर और क्लेसोबोरा दो बड़े नगर हैं और जिन के देश से हो कर जलयात्रा योग्य जो बारस नामक नदी बहती है। मेगास्थनीज़ कहता है और इसे भारतवासी भी मानते

हैं कि हेराक्लीज़ जो भूषण धारण करता था वह थीबस के हेराक्लीज़ से मिलता था। यह भी कहा जाता है कि उसे भारतवर्ष में बहुत से पुत्र उत्पन्न हुए थे (क्योंकि थीबस के हेराक्लीज़ के समान उस को अनेक स्त्रियां थीं) पर उसे एक ही कन्या थी। इस सन्तान का नाम पण्डिया था, और जिस देश में उस का जन्म हुआ था और जिस के शासन का भार उस को मिला था वह उसी के नाम के अनुसार पण्डिया कहलाता था। उस के पिता से उसे ५०० हस्ति, चार सहस्र अश्वसेना और १२०,००० पदचर सेना मिली थी। कुछ भारतवासी कहते हैं कि जब हेरेक्लीज़ संसार भर भ्रमण कर के पृथ्वी और समुद्र के दुष्ट जन्तुओं को नष्ट कर रहा था उस समय उसे समुद्र में स्त्रियों का एक भूषण मिला। इसे आज भी भारतीय वणिक जो अपनी वस्तुएं हमारे यहां ले आते हैं, बड़े चाव से क्रय कर के दूसरे देशों में ले जाते हैं और जिसे दूने चाव से आधुनिक धनिक रोमन लोग लेते हैं और जिसे पहले सम्पत्ति शाली ग्रीक लोग लेते थे। इस का नाम समुद्र का मोती है, जिसे भारतीय भाषा में मरगरित कहते हैं। इस की शोभा भूषणोपयोगी समझ कर हेरेक्लीज़ ने अपनी पुत्री को आभूषित करने के लिये सब समुद्रों से भारतवर्ष में मोती मंगाया।

मेगास्थनीज़ कहता है कि जिस सीप से यह मोती निकलता है वह जाल से बझाया जाता है। इन प्रदेशों में सीप मधुमखियों के समान झुण्ड के झुण्ड समुद्र में रहती हैं। मधुमक्खियों के समान इन्हें भी राजा या रानी होते हैं। यदि भाग्य से कोई इन के राजा या रानी को पकड़ पाता है तो अन्य सब सहज ही में बझ जाते हैं। मछुये इस के मांस को सड़ा देते हैं और हड्डी रखते हैं जिन के गहने बनते हैं। भारतवर्ष में मोती का

दाम उतने ही स्वच्छ सोने के तिगुना होता है। सोना भी भारत की खानों से निकलता है।

(८) जिस प्रान्त में हेरैक्लीज़ की दुहिता राज्य करती थी वहां कहते हैं कि स्त्रियां सात ही वर्ष में विवाह योग्य हो जाती हैं और मनुष्य अधिक से अधिक चालीस वर्ष तक जीते हैं। भारतवासियों में इस विषय में एक कथा प्रचलित है कि हेरैक्लीज़ की पुत्री उस के जीवन के अन्तभाग में उत्पन्न हुई थी। जब उस ने देखा कि उस की मृत्यु निकट है और उस का समकक्ष कोई नहीं है जिसे वह अपनी दुहिता को प्रदान करे; तब उस ने स्वयम् अपनी सात वर्ष की पुत्री से प्रसङ्ग किया, जिस में उन से उत्पन्न राजवंश भारत में राज्य कर सके। इस प्रकार हेरैक्लीज़ ने अपनी पुत्री को विवाहयोग्य बना दिया और इसी कारण उस समस्त जाति को, जिस पर पण्डिया का राज्य था, यह अधिकार उस के पिता से प्राप्त हुआ। मुझ को यह ज्ञात होता है कि यदि हेरैक्लीज़ यह कर सकता तो वह अपनी आयु भी बढ़ा सकता था जिस में अपनी पुत्री के सयाने होने पर उस से सम्भोग करता। परन्तु यदि यह सत्य है कि वहां स्त्रियां इसी अवस्था में विवाह योग्य हो जाती हैं तो मनुष्यों की आयु के विषय में जो कहा गया है कि उन में सब से दीर्घायु चालीस की अवस्था तक जीते हैं, यह भी उस के अनुकूल ही जान पड़ता है। क्योंकि जो मनुष्य इतना शीघ्र बूढ़े हो जाते हैं और बूढे हो कर मर जाते हैं, निश्चय वे पूर्ण युवा उतने ही शीघ्र होते होंगे जितने शीघ्र वे मरते हैं। इस से विदित होता है कि तीस वर्ष के मनुष्य अधबूढ़ होते होंगे, २० की अवस्था में अतीत यौवन होते होंगे और १५ वर्ष में पूर्ण

युवा होते होंगे। इसी के अनुकूल स्त्रियां भी सात वर्ष की अवस्था में विवाह योग्य हो जाती होंगी। और ऐसा क्यों न हो क्योंकि मेगास्थनीज़ कहता है कि उस देश के फल भी अन्य देशों की अपेक्षा शीघ्रता से पकते हैं और नष्ट होते हैं।

डायोनिसस से सन्द्रकोट्टस तक भारतवासी १५३ राजाओं की गणना करते हैं और ६०४२ वर्ष का काल मानते हैं। परन्तु इस बीच में तीन वार प्रजासत्तक राज्य स्थापित हुआ × × × और दूसरी वार ३०० वर्ष के लिये और तीसरी बार १२० वर्ष के लिये। वे यह भी कहते हैं कि डायोनिसस हेरैक्लीज़ से १५ पीढ़ी पहले हुआ था और उस के अतिरिक्त किसी ने भारत के विरुद्ध आक्रमण नहीं किया—कम्बीसस के पुत्र कादरस ने भी नहीं किया। यद्यपि उस ने स्कीदियन लोगों पर आक्रमण किया था और अन्य प्रकार से भी अपने को एशिया का प्रोत्साही राजा सिद्ध किया था। पर सिकन्दर ने अवश्य युद्ध में जिस पर आक्रमण किया उसी को पराभव किया। और समस्त संसार को पराजित कर लेता यदि उस की सेना उस का अनुसरन करने पर उद्यत होती। और वे यह भी कहते हैं कि भारतीय राजाओं ने न्यायदृष्टि से भारतवर्ष की सीमा के बाहर कभी विजय करने का उद्योग नहीं किया।

(१०) और कहा जाता कि भारतवासी मृत लोगों का स्मारक नहीं बनाते और समझते हैं कि जिन गुणों को उन लोगों ने अपने जीवनकाल में प्रदर्शित किया और जिन कविताओं में उन का यश वर्णित है वे ही उन की स्मृति जीवन्त रखने के लिये अलम् होंगे। कहा जाता है कि उन के नगर इतने अधिक हैं कि उन की संख्या निश्चित रूप से नहीं कही जा

सकती। जो नगर नदियों के अथवा समुद्र के किनारे बसे हैं वे काष्ठनिर्मित हैं क्योंकि यदि वे ईंट के बनते तो अधिक दिन तक नहीं ठहरते—इतनी घोर वर्षा वहां की होती है और इतनी हानिकारक नदियां वहां की होती हैं जो बढ़ कर उपकूल को प्लावित कर देती हैं। ऊंचे स्थलों पर ईंट और मिट्टी के नगर बनते हैं। भारत का सब से बड़ा नगर पालीबोथ्रा है जो प्रसियन * लोगों के राज्य में है। वहीं गङ्गा और एरानोबोअस मिलती हैं, गंगा सब नदियों में बड़ी हैं और एरानोबोअस तृतीय बड़ी नदी है। यद्यपि अन्य देशों की बड़ी से बड़ी नदियों से भी बड़ी है पर यह गङ्गा से छोटी है, जिस में गिरती है। इस नगर के विषय में मेगास्थनीज़ कहता है कि इस की बस्ती दोनों ओर अस्सी स्टेडियम तक विस्तृत थी और इस की चौड़ाई १५ स्टेडियम थी। इस के चतुर्दिक एक खाई थी, जो छः प्लेथ्रा चौड़ी और ३० हाथ गहरी थी। दीवाल के ऊपर ५७० दुर्ग और ६४ द्वार थे †। वही लेखक यह भी विशेष बात कहता है कि भारतवासी सभी स्वतंत्र हैं

---

* प्रसियन—इस विषय में पहले कहा जा चुका है कि सम्भवतः यह प्राच्य शब्द का अपभ्रंश है। पर कनिङ्हम का मत है कि यह 'पलाश' अथवा 'पराश' शब्द से निकला जो मगध का नामान्तर है, क्योंकि वहां पलास के वृक्ष बहुत होते हैं।

† पलीबोथ्रा—जिसे बोलचाल की भाषा में पालीपुत्र और साधु भाषा में पाटलीपुत्र कहते हैं। यह मगध की प्राचीन राजधानी है, जो आज भी पटना के लिये प्रयुक्त होता है। इस का अर्थ पाटलपुष्प का पुत्र है। त्रिनसमास नामक एक संस्कृत के

कोई किसी का दास (गुलाम) नहीं है। इस विषय में लैकी-डिमोनियन भारतवासियों से मिलते हैं। परन्तु लैकीडिमोनियन हेलोट लोगों का दास ही मानते हैं और उन से दासवृत्ति कराते हैं, और भारतवासी विदेशीय के साथ भी दास के ऐसा व्यवहार नहीं करते, अपने देशवासी के साथ कहां तक करेंगे।

(११) पुनः भारतवर्ष में मनुष्य सात जातियों में विभक्त हैं। इन में एक दार्शनिक हैं जिन की संख्या अन्यान्यों की अपेक्षा अधिक नहीं है पर ये प्रतिष्ठा और कक्षा में सब से उच्च हैं, क्योंकि इन को कोई शारीरिक कार्य नहीं करना पड़ता, न इन को अपनी कमाई में से कुछ सार्वजनिक कोष में देना पड़ता और न ये राज्य की ओर से यज्ञ आदि करने के अतिरिक्त कोई कार्य ही करने के लिये बाध्य हैं। यदि किसी साधारण व्यक्ति को यज्ञ कराना होता है तो ये ही विधि बताते हैं मानो उन के बिना इन का यज्ञ देवता को स्वीकार ही नहीं होता। भारतवासियों में इसी जाति में ईश्वरविषयक ज्ञान परिमित है,

---

आधुनिक भूगोल में इस का नाम पाली भट्ट आया है जो पाली-बोथ्रा से अधिक मिलता है। लंका के लेखों तथा गिरिनारवाले अशोक के शिलालेख में पाटलीपुत्र शब्द व्यवहृत हुआ है। रामायण के अनुसार इस का सब से प्राचीन नाम कौशाम्बी था जो विश्वामित्र जी के पिता कुश के नाम से पड़ा था। कवि लोग इसे पुष्पपुर अथवा कुसुमपुर कहते थे। गङ्गतटस्थ अन्य नगरों से कम प्राचीन होने पर भी यह सब से अधिक विख्यात हुआ। वायु पुराण के अनुसार उदय अथवा उदयाश्व ने इस नगर को ईसा के ५१९ वर्ष पूर्व बसाया [२४ वर्ष निर्वाण के बाद]।

दूसरा कोई इस विद्या का अभ्यास करने नहीं पाता। ये वर्ष की ऋतुओं के विषय में तथा राज्य पर आनेवाली आपत्ति के विषय में भविष्यद्वाणी कहते हैं, पर साधारण व्यक्तियों का भविष्य कहने की परवा नहीं करते; क्योंकि साधारण बातों से उन की विद्या से कोई लगाव नहीं रहता अथवा ऐसी बातों के लिये कष्ट करना वे अयोग्य समझते हैं। पर यदि तीन वार किसी की भविष्यद्वाणी असत्य हो जाती है उसे शेष जीवन भर मौन रहना पड़ता है और पृथ्वी पर कोई शक्ति नहीं, जो ऐसे मनुष्य को बोला सके जिसे मौन रहने का दण्ड मिला है। ये ऋषि लोग नग्न फिरते हैं। जाड़े में ये धूप खाने के लिये खुले मैदान में रहते हैं और ग्रीष्म में जब गरमी अधिक पड़ती है ये नीची भूमि में वृक्षों के नीचे रहते हैं, जिन की छाया के विषय में नियारकस कहता है कि पांच प्लेथ्रा गोल होती है और जिन के नीचे दस सहस्र मनुष्य अंट सकते हैं। ये फलाहार करके रहते हैं जो प्रत्येक ऋतुओं में होते हैं और छाल भी खाते हैं—ये छाल खजूर के फल से कम मीठा और गुणकारी नहीं होते।

इन के बाद दूसरी जाति किसानों की है जिन की संख्या सब से अधिक है। न उन्हें अस्त्र शस्त्र मिलता है और न उन्हें युद्ध ही में सम्मिलित होना पड़ता है। वे भूमि जोतते हैं और कर राजा तथा स्वाधीन नगरों को देते हैं। आपस के युद्ध में योद्धाओं का किसानों को छेड़ने तथा उन की भूमि को नष्ट करने नहीं दिया जाता। इसी प्रकार जब कि योद्धा लड़ते और मरते रहते हैं, किसान पास ही शान्तिपूर्वक अपना कार्य करते रहते हैं। कभी हल चलाते, फसिल काटते अथवा वृक्षों को काटछांट कर ठीक करते रहते हैं।

तीसरी जाति भारतवासियों की गड़ेरिये और बैल पोसने वाले हैं। ये नगर या ग्रामों में नहीं रहते, पर पर्वतों पर भ्रमण करते हैं। इन्हें भी कर देना पड़ता है, जिन के बदले ये पशु देते हैं। पक्षी तथा वन्यपशुओं का पीछा करने में ये सारा देश घूम आते हैं।

(१२) चतुर्थ जाति शिल्पकार तथा छोटे वणिकों की है। इन्हें बिना पुरस्कार के कई सार्वजनिक कार्य करना पड़ता है और अपनी बनाई हुई वस्तुओं में से कर देना पड़ता है। अस्त्र-कारों को यह क्षमा है—इतना ही नहीं, उन्हें राज्य से पुरस्कार भी मिलता है। इसी जाति के अन्तर्गत जहाज बनानेवाले और नदियों में नौका चलानेवाले नाविक हैं।

भारतवासियों में पांचवीं जाति योद्धाओं की है जिन की संख्या किसानों के बाद सब से अधिक है, पर ये अत्यन्त स्वच्छन्द और सुखमय जीवन व्यतीत करते हैं। इन्हें केवल सेना सम्बन्धी कार्य करना पड़ता है। दूसरे लोग उन के शस्त्र बनाते हैं; दूसरे लोग उन्हें घोड़े देते हैं और दूसरे ही लोग शिविरों में उन की सेवा करते हैं, घोड़ों को देखते हैं, उन के शस्त्र साफ करते हैं, हाथी हांकते हैं, रथ सज्जित करते हैं और सारथी का काम करते हैं। जब तक युद्ध करने की आवश्यकता होती है तब तक वे युद्ध करते हैं और जब शान्ति स्थापित हो जाती है तब वे सुखोपभोग करने में निमग्न हो जाते हैं। उन्हें इतना अधिक राज्य से वेतन मिलता है कि वे सुखपूर्वक अपना तथा दूसरों का भी निर्वाह कर सकते हैं।

छठीं जाति निरीक्षकों की है। वे देखते रहते हैं कि देश अथवा नगरों में क्या होता जाता है और सब कुछ राजा के प्रति

निवेदन करते हैं—यदि देश में राजा रहता है; और जहां प्रजा सत्ताक राज्य है वहां राज्यशासकों से निवेदन करते हैं। मिथ्या-कथन इन की प्रथा के विरुद्ध है—सचमुच भारतवासी पर झूठ बोलने का दोष आरोपण नहीं होता।

सातवीं जाति राज्य के मन्त्रकारों की है, जो राजा को अथवा स्वतन्त्र नगरों में शासकों को सार्वजनिक कार्यों के प्रबन्धमें मंत्रणा देते हैं। संख्या में यह जाति छोटी है पर अधिक बुद्धिमत्ता और न्यायपरता के लिये यह प्रसिद्ध है। इस से इस को अधिकार है कि प्रधान शासक, प्रादेशिक, उपप्रादेशिक, कोषाध्यक्ष, सेनानायक, नौ सेनानायक निरीक्षक, कृषिविभाग के निरीक्षक आदि को चुन सकें।

इस देश की प्रथा से अन्य जाति में विवाह करना वर्जित है—यथा किसान शिल्पकार जाति की स्त्री से विवाह नहीं कर सकता, न शिल्पकार किसान जाति की स्त्री से सम्बन्ध कर सकता है। प्रथा के अनुसार दो प्रकार का व्यवसाय करना और जाति का बदलना निषिद्ध है। यथा गड़ेरिया किसान नहीं हो सकता या शिल्पकार गड़ेरिया नहीं हो सकता। केवल दार्शनिक किसी जाति का मनुष्य हो सकता है, क्योंकि दार्शनिक का जीवन सहज नहीं है, वरन सब से कठिन है।

(१३) भारतवासी सब जंगली जन्तुओं का उसी प्रकार आखेट करते हैं, जिस प्रकार ग्रीस निवासी; परन्तु हाथी के आखेट करने का प्रकार विचित्र है क्योंकि ये जन्तु अन्य पशुओं के समान नहीं होते। इस का वृत्त निम्न है—आखेट करनेवाले सूखी समतल भूमि चुन कर उस के चारो ओर गढ़ा खोदते हैं जिस के बीच में बड़ी सेना अंट सके। यह गढ़ा पांच पोरसा

चौड़ा और चार पोरसा गहरा होता है। गढ़ा खोदने से जो मिट्टी निकलती है उसे गढ़े के दोनों ओर ढेर लगा देते हैं और दीवाल का काम इस से लेते हैं। गढ़े के बाहरवाले दीवाल को खोद कर वे अपने लिये कोठरी बनाते हैं। इस में प्रकाश आने के लिये और हाथियों को निकट आते और भीतर घुसते हुए देखने के लिये वे छिद्र छोड़ देते हैं। तब वे तीन या चार सिखाये हुए हथिनिया को भीतर छोड़ देते हैं और भीतर जाने का केवल एक रास्ता पुल से हो कर जाने का रहता है। इस पुल को वे मिट्टी और पुआल से छिपा देते हैं, जिस में वे जन्तु धोखा का सन्देह न करें। आखेट करनेवाले तब सामने से हट कर अपनी दीवाल की कोठरियों में चले जाते हैं। हाथी सब बस्ती के निकट दिन के समय नहीं जाते पर रात को वे सब स्थानों में घूमते हैं और झुण्ड झुण्ड एक बड़े हाथी के पीछे २ चरने निकलते हैं, जिस प्रकार गौए सांढ़ के पीछे २ चलती हैं। जैसे ही वे गढ़े के निकट पहुंचते हैं और हथिनियों के शब्द सुनते हैं वैसे ही वे पूर्ण वेग से उस ओर दौड़ते हैं और गढ़ा देख कर उस को चारो ओर घूमते हैं और जब पुल मिलता है तो उसी के द्वारा बलात् भीतर चले जाते हैं। आखेट करने वाले उन को भीतर जाते देख कर कुछ तो पुल हटाने के लिये दौड़ते हैं और कुछ ग्राम में समाचार पहुंचाने के लिये जाते हैं। यह समाचार पाकर गांववाले सब से साहसी और शिक्षित हाथियों पर चढ़ कर आते हैं। पर वे तुरत युद्ध नहीं करते, कुछ ठहरने के बाद जब ये भूख और प्यास से व्याकुल हो जाते हैं और जब वे समझते हैं कि ये पूर्ण रूप से निर्बल हो गये तब फिर से पुल लगा कर हाथी पर चढ़े भीतर जाते हैं और

उतर कर उन के पैर बेड़ियों से जकड़ देते हैं। तब पोसुये हाथियों को उन्हें मारने का इङ्गित करते हैं जिस से वे भूमि पर गिर पड़ते हैं। आखेटक जो निकटही खड़े रहते हैं, उन के गले में रस्सी बांध देते हैं और जब वे भूमि पर पड़े रहते हैं तभी उन पर आरोहण करते हैं। और जिस में वे कोई हानि नहीं कर सकें या हिला कर गिरा न दें इस लिये एक तीक्ष्ण छुरी से उन के गले की चारों ओर काट कर गढ़ा कर दिया जाता है और उसी गढ़े में रस्सी लगा दिया जाता है। इस घाव के कारण वे अपनी गर्दन और सिर सीधा रखते हैं। क्योंकि यदि वे इधर उधर फिरें तो रस्सी से उन के घाव में चोट पहुंचती है। इसलिये वे अधिक नहीं हिलते और यह समझ कर कि वे पराभूत हुए हैं पोसुए हाथियों का अनुसरण करते हैं।

जो बहुत बच्चे होते हैं या दुर्बल होने के कारण पोसने योग्य नहीं होते उन्हें लोग भाग जाने देते हैं। जो रख लिये जाते हैं उन्हें लोग ग्राम में ले जाते हैं और उन्हें खाने को अन्न की हरी डंटी तथा घास देते हैं। इन जन्तुओं के बल का ह्रास हो जाने के कारण भोजन अच्छा नहीं लगता, परन्तु भारत-वासी इन की चारों ओर खड़ा होकर ढोल और झाल बजा कर और गीत गाकर इन्हें शान्त और प्रसन्न करना चाहते हैं। हाथी सब जन्तुओं में अधिक चतुर होते हैं। कुछ हाथी अपने सवार के युद्ध में मारे जाने पर उन्हें अन्त्योष्टि क्रिया करने के लिये उठा ले गये हैं, कुछ ने अपने सवार को भूमि पर देख ढाल से छिपा रखा है और कुछ हाथियों ने उन के गिर पड़ने पर युद्ध में अघात सह कर बचाया है। एक हाथी ने क्रोध में अपने सवार

को मार डाला था पर उसे इतनी ग्लानि हुई कि उस ने प्राण त्याग दिया। मैं ने स्वयम् एक हाथी को झाल बजाते देखा है जब कि दूसरे हाथी उस के अनुसार नाचते थे। उस के आगे-वाले दोनों पैरों में झाल बांध दिया गया था और एक झाल उस की सूढ़ में भी। वह उचित समय पर दोनों पैरों में सूड़ के झाल से मारता था जब तक नाचनेवाले हाथियां गोलाकार हो कर नाचते थे और पारी से आगे वाले पैर ठीक समय पर उठा कर टेढ़ा करते थे और बजानेवाले हाथी का अनुसरण करते ते।

घोड़े और सांड़ के समान हाथी बसन्त में सङ्गम करते हैं। उसी समय हथिनियां गण्डस्थल के नीचे वाले छिद्र से जो उस समय खुल जाता है स्वांस छोड़ती है। कम से कम गर्भ का समय १६ मास और अधिक से अधिक १८ मास होता है। घोड़ी के समान ये एक ही बच्चा जनती हैं और आठ वर्ष तक दूध पिलाती है। दीर्घजीवी हाथियां २०० वर्ष जीते हैं पर उन में बहुत से रुग्न हो कर अकाल ही मर जाते हैं। यदि वे बूढ़े हो कर मरते हैं तो वे उक्त काल तक जीते हैं। उन की आंख के रोग गौ के दूध लगाने से अच्छे होते हैं और अन्यरोग काला-मद्य पिलाने से। उन के घाव शूकरमांस उसिन कर लगाने से अच्छे होते हैं। ये ही औषधि भारतवासी करते थे।

पर भारतवासी व्याघ्र को हाथी से अधिक बली समझते हैं। नियारकस कहता है कि उस ने व्याघ्र का खाल देखा था पर व्याघ्र नहीं देखा। भारतवासियों ने उस से कहा कि व्याघ्र बड़े बड़े घोड़े के बराबर होते हैं पर बल और फुर्ती में इन की कोई पशु समता नहीं कर सकता। व्याघ्र से जब हाथी

का सामना होता है तब वह उस के सिर पर कूद कर चढ़ जाता है और सहज ही गला दबा कर मार डालता है। पर जिन पशुओं को हमलोग व्याघ्र कहते हैं वे केवल चिन्हयुक्त चर्मवाले शृगाल हैं जो साधारण शृगालों से बड़े होते हैं। इसी प्रकार नियारकस चींटियों के विषय में कहता है कि जिन के विषय में दूसरे लेखक लिख गये हैं उन्हें उस ने स्वयम् कभी नहीं देखा है, पर मैकोडन लोगों के शिविर में उस के खाल लाये गये थे जिन्हें उस ने देखा है। पर मेगास्थनीज़ कहता है कि चीटियों के विषय में जो कुछ कहा गया है वह पूर्णत: सत्य है। यह सत्य है कि वे सोना खोद कर निकालती हैं—सोना के लिये नहीं, पर अपने रहने के लिये भूमि में छिद्र बनाना उन का स्वभाव है जिस प्रकार हमारे देश में छोटी चीटियां अपने लिये छोटे छिद्र बनाती हैं। केवल भारत की चीटियां जो लोमड़ियों से बड़ी होती हैं वे अपने अनुकूल बड़े छिद्र बनाती हैं। पर भूमि सुवर्ण से भरा है जहां से भारतवासी सोना पाते हैं। मेगास्थनीज़ कहता है कि उस ने सुनी हुई बात लिखी है और मुझे कोई निश्चित बात ज्ञात नहीं है अतएव मैं चींटी का विषय छोड़ता हूं।

पर तोताओं के विषय में नियारकस कहता है कि वे एक नये आश्चर्य के पक्षी हैं। वे भारत के जीव हैं और मनुष्य के समान बोलते हैं। पर मैं ने स्वयम् अनेक तोताओं को देखा है और अन्य लोगों को जानता हूं जो उस से परिचित हैं इस से उस के विषय में कुछ नहीं कहूंगा। और न मैं बनमनुष्य के आकार अथवा सुन्दरता के विषय में कुछ कहूंगा, जिस के लिये वे भारत में प्रसिद्ध हैं और न मैं यह कहूंगा कि उन का

आखेट किस प्रकार किया जाता है, क्योंकि यह सब अच्छी तरह से ज्ञात है केवल यही अज्ञात होगा कि वे सुन्दर होते हैं। सर्पों के विषय में भी नियारकस कहता है कि वे उस देश में पकड़े जाते हैं। ये चिन्हयुक्त और फुर्त्तिले होते हैं। एन्टी जिनिस के पुत्र पीठो ने जिसे पकड़ा था वह १६ हाथ का था और बड़े २ अजगर उस से भी बड़े होते हैं। पर अभी तक ग्रीस के वैद्यों ने भारतीय सर्प के काटने की औषधि कोई नहीं निकाली है यद्यपि यह निश्चित है कि भारतवासी सांप के काटे मनुष्यों को अच्छा कर सकते हैं। सिकन्दर अपने निकट बहुत भारतवासियों को जो इस विद्या में निपुण थे रखा था और समस्त शिविर में कहला दिया था कि जिसे सांप काटे वह उस के शिविर में आवे। ये लोग अन्य रोग और कष्ट भी दूर कर सकते थे। भारतवासियों को अनेक प्रकार के रोग शोक नहीं होते क्योंकि उन के देश में ऋतुएं उन के अनुकूल होती हैं। अधिक पीड़ित होने पर लोग दार्शनिक से दिखलाते हैं और ये उन कष्टों को दूर करते हैं जो ईश्वरी सहायता के बिना दूर नहीं हो सकते।

१६। नियारकस कहता है कि भारतवासी रूई के कपड़े पहनते हैं। यह रूई उन वृक्षों से उत्पन्न होते हैं जिन के विषय में ऊपर कहा गया है।* यह रूई अन्य देश की रूई से अधिक स्वच्छ होती है अथवा भारतवासियों के कृष्णवर्ण होने से वे अधिक स्वच्छ मालूम होते हैं। वे नीचे एक कपड़ा पहनते हैं जो ठेहुना और घुट्ठी के बीच तक लटकता रहता है और वे ऊपर से एक कपड़ा पहनते हैं जिसे वे कान्धे पर डाल कर सिर में

* एरियन ने पहले कहीं रूई के विषय में नहीं कहा है।

लपेट लेते हैं॰। भारतवासी हाथीदांत की बाली पहनते हैं। पर जो धनी हैं वे ही ऐसा करते हैं। नियारकस कहता है कि वे अपनी दाढ़ी अपनी रुचि के अनुसार रङ्गों से रंगते हैं॥। कुछ लोग अपनी श्वेत दाढ़ी को और भी श्वेत करने के लिये रंगते हैं और कुछ लोग नीला रंगते हैं; कुछ गुलाबी पसन्द करते हैं कोई लाल और कोई हरा। ऐसे भारतवासी जो गण्य मान्य हैं वे धूप से बचने के लिये छत्र धारण करते हैं। वे उजले चमड़े का जूता पहनते हैं। ये बड़ी सुन्दरता से बने रहते हैं और तला भिन्न प्रकार का और बहुत मोटा होता है जिस में पहनने वाला बहुत ऊंचा ज्ञात हो।

मैं अब यह वर्णन करता हूं कि भारतवासी युद्ध किस प्रकार करते हैं पर पहले ही कह देता हूं कि यही एक प्रकार प्रचलित नहीं है। पदाति एक धनुष ले चलता है जो लम्बाई में उस के बराबर होता है। इसे वे भूमि पर रख कर बांएं पैर से नवाते हैं और ज्या खींच कर तीर छोड़ते हैं। इन के तीर

॰ कपास से कपड़ा बनाने की विद्या बहुत प्राचीन समय से भारतवासियों को ज्ञात है। ऋग्वेद में इस का वर्णन आया है। सिकन्दर के साथ आने वाले ग्रीक लोगों के लिये यह एक नया पदार्थ था। उन्हों ने लिखा है कि हिन्दू लोग ऐसे ऊन का कपड़ा पहनते हैं जो वृक्ष पर होता है। वे लिखते हैं कि भारतवासी एक कपड़ा ठेहुना के नीचे तक पहनते हैं और दूसरा कन्धे में लपेट लेते हैं। अजन्ता के गुफा में इस वेष के चित्र हैं। आज के और २००० वर्ष पहले के कपड़े में यही अन्तर है कि अब धोती कुछ बड़ी होती है।

॥ ऐसी प्रथा स्ट्रेबो ने भी लिखी है।

तीन गज से कुछ छोटे होते होंगे। भारतवासी के तीर को कुछ भी रोक नहीं सकता—न ढाल न भीलम बख्तर न कोई दूसरा पदार्थ कैसा ही मजबूत क्यों न हो। बांए हाथ में वे बैल के चमड़े का ढाल ले चलते हैं जो उतना चौड़ा तो नहीं होता जितना वे होते हैं पर उन के बराबर लंबा होता है। कुछ लोगों के पास धनुष के बदले बरछी रहता है पर सभी को तलवार रहती है जिस का फल चौड़ा होता है पर यह तीन हाथ से अधिक लम्बी नहीं होती। और जब वे निकट आ कर संग्राम करते हैं (पर वे ऐसा इच्छा से नहीं करते) तब दोनों हाथ से तलवार चलाते हैं जिस में चोट पूरी लगै। अश्वारोही को दो भाले होते हैं और पदाति से छोटा एक ढाल होता है। पर घोड़े पर वे जिन नहीं कसते और न ग्रीक और केल्टलोगों के समान मुंह में लगाम देते हैं पर वे घोड़े के मुंह की चारो ओर बैल के चमड़ा बांधते हैं जिस में भीतर की ओर लोहे या पीतल के कांटे लगे रहते हैं, पर ये बहुत चोखे नहीं होते। जो बहुत धनी होते हैं वे हाथी दांत के कांटे व्यवहार में लाते हैं। घोड़े के मुख में एक लोहा रहता है जिसमें लगाम लगा रहता है। जब अश्वारोही लगाम खींचते हैं तब वही लोहा घोड़े को वश में करता है क्योंकि उस में कांटे लगे रहते हैं जो मुंह में गड़ते हैं जिस से घोड़े को लगाम के अनुसार चलना पड़ता है।

(१७)। भारतवासी पतले और लम्बे होते हैं और अन्य मनुष्यों से कहीं हलके होते हैं। साधारण रूपसे चढ़ने के लिये ऊंट, घोड़े और गधे होते है पर धनी लोग हाथी पर चढ़ते हैं। राजा भी हाथी ही पर चढ़ते हैं। इस के बाद रथ का

आदर होता है, तत् पश्चात ऊंट का और एक घोड़े से चलना कोई गौरव की बात नहीं समझी जाती। बिना दायज लिये या दिये विवाह करते हैं। स्त्रियां जैसे ही विवाह योग्य हो जाती हैं वैसे ही सर्वसाधारण के सम्मुख लायी जाती है और जो कुश्ती करने में, लड़ने में या दौड़ने में या और किसी शारीरिक कसरत में जीतता है उस को दी जाती हैं। भारतवासी अन्न खाकर जीते हैं और भूमि जोतते हैं पर पहाड़ी लोग आखेट कर के मांस खाते हैं।

भारतवासियों के विषय में इतना कह देना मेरे लिये अलम् है। इसे नियारकस और मेगास्थनीज़ दो श्लाघ्य चरित्र के मनुष्यों ने लिखा है, और मेरा तात्पर्य्य भारतवासियों के स्वभाव एवम प्रथा वर्णन करने का नहीं था, पर यह था कि सिकन्दर फारस से हिन्द में किस प्रकार अपनी सेना ले गया अतएव यह कथा मात्र समझी जाय।



बिक्री की पुस्तकें।

१	मैथिलकोकिल विद्यापति	१।)
२	सिक्ख गुरुओं की जीवनी	
३	हिन्दी सिद्धान्त प्रकाश	॥)
४	गल्प कुसुमावली	॥)
५	रसायन शास्त्र (Chemistry)	॥=)
६	अर्थशास्त्र (Political Economy) ...	=)
७	तर्कशास्त्र (Logic)	।=)॥
८	भारतवर्ष के इतिहास की समालोचना ...	=)
९	खगोलविज्ञान (सचित्र)	≡)
१०	सृष्टितत्व	=)
११	बाबू रामदीन सिंह की जीवनी ...	-)
१२	बाबू राधाकृष्णदास की जीवनी ...	-)॥
१३	पण्डित बलदेव प्रसाद की जीवनी ...	-)
१४	पेडलर साहब की जीवनी	-)
१५	श्री तारकेश्वर यशोगान	)॥
१६	सिद्धनाथ कुसुमाञ्जलि	=)
१७	अपराजिता उपन्यास	-)॥
१८	आरा पुरातत्व	≡)
१९	कलवार की उत्पत्ति (समालोचना) ...	-)
२०	राजेन्द्रमालती उपन्यास	=)
२१	अद्भुतप्रायश्चित्त उपन्यास	=)॥
२२	विचित्रसंग्रह काव्य	-)

मिलने का पता—

मन्त्री—नागरीप्रचारिणी सभा

आरा।